जूलाई २००८

दादावाणी

किमत रु.१०

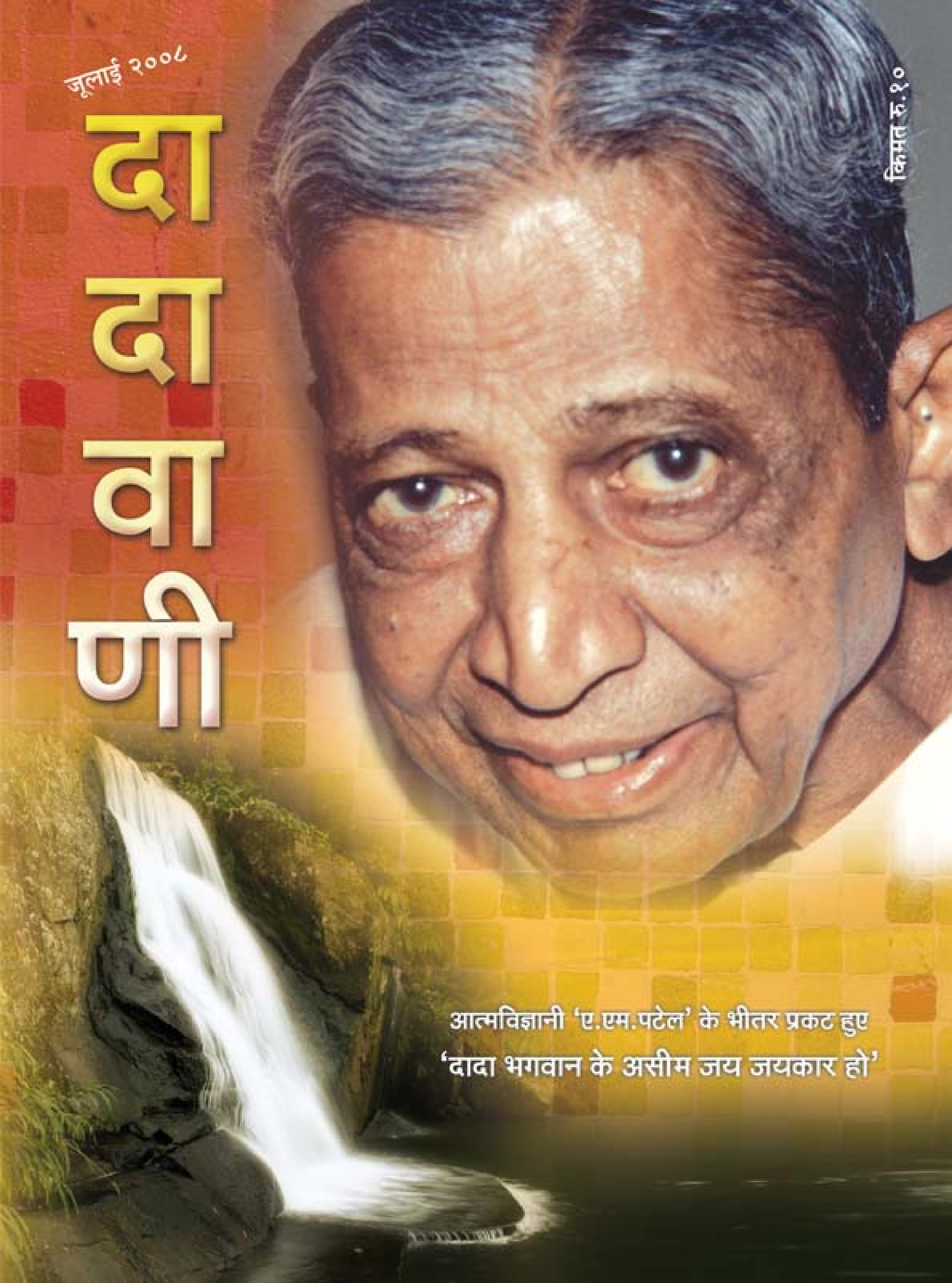

आत्मविज्ञानी 'ए.एम.पटेल' के भीतर प्रकट हुए

'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो'

तंत्री तथा संपादक :
दीपक देसाई
वर्षः ३, अंक : ९
अखंड क्रमांक : ३३
जुलाई, २००८

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ वे,
पो.ओ.: अडालज,
जि.: गांधीनगर-३८२४२१
फोन : (०७९)३९८३०१००
e-mail :
dadavani@dadabhagwan.org
अहमदाबाद : (079)27540408, 27543979
मुंबई : 9323528901-02
राजकोट त्रिमंदिर :
9924343478,9274111393
U.S.A. : 785-271-0869
U.K.: 07956476253
Website : www.dadashri.org
www.dadabhagwan.org

Publisher, Owner & Printed by :
Deepak Desai on behalf of
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Printer/Press :
Mahavideh Foundation
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता फी)
१५ साल का
भारत : ८०० रुपये
यु.एस.ए. : १०० डॉलर
यु.के. : ७५ पाउन्ड
वार्षिक
भारत : १०० रुपये
यु.एस.ए. : 10 डॉलर
यु.के. : 7 पाउन्ड
भारत में D.D. / M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से पेयेबल अहमदाबाद का भेजे।

दादावाणी

अहो ! करुणा, ज्ञानी की

संपादकीय

संसार में धर्म तो सभी पालते हैं मगर उसका परिणाम क्या होना चाहिए ? इसका मर्म बिना ज्ञानी के कौन समझा सकता है? वीतरागों के हृदय की बात उनके बगैर कौन बता सकता है? अक्रमज्ञानी परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) इसका रहस्य प्रकट करते हुए कहते हैं कि 'धर्म की शुरूआत दया से होती है और उसका अंत करुणा से होता है।'

दया यद्यपि द्वन्द्व गुण हैं क्योंकि दया होगी वहाँ निर्दयता होती ही है। दया करनेवाला व्यक्ति कब निर्दयी व्यवहार कर बैठे इसके बारे में कुछ कहा नहीं जाता। चूहे को बचाने के प्रयत्न में बिल्ली के प्रति निर्दय व्यवहार हो ही जाता है न? और वे दोनों ही कर्म फिर कर्मबंधन के कारण रूप होते ही हैं।

दया, अनुकंपा, सहानुभूति आदि पौद्गलिक गुण द्वन्द्व गुण होने के कारण उनके प्रतिपक्षी अवगुण भी होते हैं। गुण-अवगुण से परे होने पर ही करुणा पद में आ सकते हैं। तभी भगवान पद की प्राप्ति होती है। भगवान गुण-अवगुण से परे केवल करुणामयी और प्रेमस्वरूप होते हैं।

सच्चा धर्म यही है जो खुद को आत्मस्वरूप का भान करवाकर, पाप-पुण्य के कर्मबंधनो से छुड़ाकर मुक्तिपद को प्राप्त करवाये। इसलिए ही दादाश्री का कहना हैं कि जीवन का अंतिम ध्येय, धर्म का आराधन करते-करते दया, सहानुभूति, अनुकंपा आदि गुणों को पार करके करुणाभाव में आने का होना चाहिए कि जहाँ पहुँचकर वीतरागों ने अनेकों का कल्याण करते हुए मुक्तिपद की प्राप्ति की है।

दादाश्री ने खुद आत्मरमणता में रहकर लोककल्याण की भावना से जो करुणासभर व्यवहार किया वह अपने आप में एक अनूठी मिसाल है। दादाश्री ने अपने सत्संगो में अलग अलग दृष्टिबिन्दु से क्षमा, करुणा, कारुण्यता, प्रेम के बारे में जो समझ दी है वह वाकई अद्भूत है! वीतरागता के साथ व्यवहार जागृति केवल ज्ञानीपुरुष के निरपेक्ष व्यवहार में ही देखने को मिलती है। किसी भी प्रकार के अहंकार, निज़ी स्वार्थ या बिना कोई अपेक्षा, केवल लोककल्याण के लिए जो करुणा उन्हों ने बहायी वह बेजोड़ है। किसी भी जीव को किंचित्मात्र भी दुःख न हो ऐसी निरंतर जागृति रखकर जगत को जो कारुण्यता बक्षी है, वह इस कलिकाल की अलौकिक घटना वर्तमान नें लोकहृदय में सुवर्ण अक्षरों से अंकित हुई है।

ऐसे करुणासागर प्रकट परमात्मा की ज्ञानभक्ति के द्वारा हम अपने डिस्चार्ज कषायों का समभाव से निबटारा करके उनके द्वारा रोपे गये ज्ञानबीज को अविरत आज्ञापालन और ज्ञान जागृति के सिंचन से जगतकल्याण के उनके मिशन को सार्थक करने के पुरुषार्थ में जुट जायें और अपना जीवन सार्थक करें इसी अभ्यर्थना के साथ जय सच्चिदानंद।

दीपक देसाई ...

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेजी शब्द का अर्थ है अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। पाठक जहाँ पर भी चंदुभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर कोई बात आप समझ न पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधार कर समाधान प्राप्त करें। भाषांतर में कोई कमी नज़र आये तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

अहो ! करुणा, ज्ञानी की

मगर अंतत: करुणा ही

प्रश्नकर्ता : धर्म के तीन सोपान कहे हैं। अनुकंपा, सहानुभूति और करुणा। कृपया इनके बारे में कुछ प्रकाश डालिये?

दादाश्री : धर्म की शुरूआत दया से होती है और अंत करुणा से होता है। इनमें सहानुभूति वह तो कोई धर्म ही नही कहलाए। सहानुभूति का संबंध संसार से है। केवल करुणा का ही धर्म से सरोकार है। मगर करुणा तो आत्मज्ञान होने के बाद होती है। और अनुकंपा वह दया का नज़दीकी शब्द है। मगर उसमें तो खुद को दु:ख होता है न? उसका क्या फायदा? ऐसा तो कई अवतारों में किया है, जिसके फल स्वरूप ये भौतिक सुख मिले हैं। यदि भौतिक सुखों की आशा करते हैं तो यही का यही किया कीजिए। बीज बोयेंगे और फल पाएँगे। करुणा की तो बात ही अलग है। आत्मज्ञानी के ऊपरी अधिकारी, यानी केवल तीर्थंकरों को करुणा होती है। अन्य किसी को करुणा नहीं होती।

इन सभी सोपानों के कोई माने नहीं है। इन सभी सोपानों पर से तो लुढ़क-लुढ़क मर गए थे। इनमें से एक सोपान सही है, करुणा। मगर वह हमारे हाथों लगनेवाली नहीं।

प्रश्नकर्ता : करुणा क्यों नहीं आए?

दादाश्री : वह तो वीतरागता आने पर आती है। वीतराग ही करुणा करें।

दया तो है पौद्‌गलिक गुण

प्रश्नकर्ता : मगर संवेदनशीलता, दया, आदि वे सारे अच्छे गुण हैं न?

दादाश्री : उन गुणों के साथ-साथ अवगुण भी है। जिसमें अवगुण नहीं होता उसमें गुण भी नहीं होता! महावीर भगवान में वह गुण भी नहीं होता और अवगुण भी नहीं होता। भगवान में दया नामक गुण ही नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : मगर जिसमें दया ही नहीं हो, निष्ठुर हो, उसकी तुलना में दयावान अच्छा न?

दादाश्री : बहुत ही अच्छा। दया तो धर्म का प्रधान गुण है। दया से धर्म की शुरूआत होती है। मगर आखिर दया के सोपानों को छोड़कर उपर उठना होगा। पूरी सीढ़ी ही छोड़ देनी होगी, क्योंकि दया के साथ निर्दयता अवश्य होती ही है। दया द्वन्द्व गुण है। मगर दया और निर्दयता दोनों छूटें तब करुणा उत्पन्न होती है। उसके बाद भगवान हो सके।

प्रश्नकर्ता : तब फिर वीतरागों के अलावा और किसी ने यह बात क्यों नहीं बताई? केवल दया की ही बातें क्यों करते रहते हैं?

दादाश्री : दया के आधार पर ही, उस दया को लेकर ही उनका धर्म चल रहा है। दया नहीं रही तो वे निर्दय हो जाएँ न? और उनकी निर्दयता देखकर लोगों को भड़क हो जाए कि, यह मनुष्य इतना निर्दयी है?

ऐसा है न, दया, सहानुभूति आदि सब

पौद्‌गलिक गुण कहलाएँ। उन पौद्‌गलिक गुणों का कोई भरोसा नहीं। कब सन्निपात(पागलपन) हो जाए और फ्रेक्चर हो जाए(टूट जाए), कहा नहीं जाता। वे प्राकृतिक गुण हैं और प्रकृति सन्निपातवाली है। वात, पित्त और कफ का अतिरेक हुआ तो सन्निपात हो जाए और सन्निपात होते ही सारे पौद्‌गलिक गुण भाग जाएँ।

अंतर, दया और करुणा में

प्रश्नकर्ता : दया और करुणा में हकीकत में अंतर क्या है?

दादाश्री : दया यह द्वन्द्व गुण है। द्वन्द्व गुण मतलब समझ में आया? नफ़ा और नुकसान, यदि नुकसान है तो उसके सामने कोई शब्द होना चाहिए न? नफ़ा। वैसे वह द्वन्द्व गुण है। भले ही थोड़ी हो, बहुत अल्प हो मगर दया के सामने द्वन्द्व हाज़िर होता ही है, निर्दयता होगी ही। और जहाँ निर्दयता है वहाँ दया होगी ही। सुख होता है वहाँ दु:ख होता ही है। वे सभी द्वन्द्व गुण हैं। करुणा में ऐसा नहीं होता। ज्ञानीपुरुष को सुख-दु:ख, यश-अपयश, दया-निर्दयता ऐसे द्वन्द्व नहीं होतें। वे द्वन्द्व से परे हो गए होते हैं। द्वन्द्वातीत हो गए होते हैं।

मतलब, दया होगी वहाँ निर्दयता का होना तय ही है। अस्सी फीसदी दया होगी तो निर्दयता बीस फीसदी होगी। दया पचासी फीसदी होती है तो पंद्रह फीसदी निर्दयता होती है। दया नब्बे फीसदी होने पर दस फीसदी निर्दयता होती है और यदि दया सौ फीसदी हो गई तो करुणा हो गई। उसके बाद अहंकार रहता ही नहीं। निर्दयता है तब तक ही अहंकार रहे।

प्रश्नकर्ता : (जब किसी पर) दया होती है तब क्या वह अहंकार के रूप में होती है?

दादाश्री : अहंकार ही है वह। वह खुला अहंकार है। दया एक प्रकार का अहंकार है, मगर वह शुभ अहंकार है, बहुत हितकारी है। मगर वह अहंकार भी कभी न कभी छोड़ना होगा। ज्ञानी होने पर, दया शोभा नहीं देती।

प्रश्नकर्ता : तो फिर वह दया किस काम की?

दादाश्री : जब तक अज्ञानता नहीं गई है तब तक दया होती ही है। जब तक आत्मज्ञान नहीं होता तब तक दया की ज़रूरत है। तब तक दया हितकारी है, फायदेमंद है। मगर वहाँ भी भगवान ने ऐसा कहा है कि स्थूल दया नहीं, भाव दया रखना। इसका मतलब यह हुआ कि आत्मज्ञान से निम्न श्रेणी में दया होनी चाहिए। दया से धर्म होता है। निर्दयता से धर्म नहीं होता है।

कोई एक बड़े संत महाराज अभी यहाँ बैठे हों, वे हमें इतने दयालु लगे कि उनकी प्रत्येक क्रिया में हमें दया ही दिखाई दिया करे। मगर किसी दिन, किसी शिष्य के साथ झँझट होने पर वे अकुलाये हों और यदि तब हम उनसे मिलने गए हों तो हमें ऐसा हो कि, 'अरे! इतने क्यों अकुलाये लगते हैं?' यानी निर्दयता एक कोने में पड़ी रही होती है। उस संत को भी ऐसा ही लगता हो कि मैं बहुत बड़ा दयालु हूँ। भगवान जैसा दयालु हूँ, ऐसा लगे। पर जब निर्दयता निकले न, उस दिन चहेरा मुरझा जाए।

मतलब, दया होगी वहाँ निर्दयता होगी यह बात निश्चित है। वह निर्दयता कहीं किसी कोने में पड़ी हुई होती है, जिसका किसी को पता तक नहीं होता है। खुद मालिक को भी खबर नहीं होती कि किस कोने में पड़ी हुई है! फिर भी दया रखने योग्य है। संसार में जहाँ ज्ञान नहीं है वहाँ पर दया रखनी ही चाहिए। दया से बहुत बड़ा लाभ होगा। वर्ना निर्दयता काम किया करेगी। दया नहीं रखेंगे तो निर्दयता उत्पन्न होगी। क्योंकि हमारे इस हिन्दुस्तान की स्थिति में दया नहीं रखने पर निर्दयता उत्पन्न होती है और फ़ॉरीन(विदेश) में लोग दया नहीं रखें

तो भी कोई हर्ज नहीं है, निर्दयता उत्पन्न होगी ही नहीं। फ़ॉरीन के लोग तो साहजिक हैं।

'दया हो वहाँ निर्दयता भरी पड़ी होती है' यह वाक्य बाहर लोगों से नहीं कहा जाए। वर्ना लोग, दया को भी छोड़ने के लिए तैयार हो जाएँगे कि 'अच्छा हुआ, अब दया रखने की ज़रूरत नहीं रही।' मगर धर्म का पहला सोपान ही दया है। लेकिन उससे भी आगे जाना होगा, करुणा में आना होगा।

दया की शुरूआत शुभेच्छा से होती है और निरीच्छक होने तक दया होती है। फिर आगे दया नहीं होती, आगे करुणा होती है। मतलब दया का गुण ज़रूरी है, मगर दया धर्म के रूप में होनी चाहिए। और निर्दयता स्वभाव से ही निर्दयता है। अब दया वह धर्म का बीजभूत गुण है। यानी बीज के रूप में है, वृक्ष के रूप में नहीं है। वृक्ष के रूप में तो करुणा होनी चाहिए, सर्व जीव समान। यानी दया धर्म की शुरूआत है, बिगिनिंग है। मगर उस दया के 'एन्ड' पर, ज्ञान है, मुक्ति है।

निज दु:ख टालने, दिखलाये दया

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में दया किसे कहलाए? उसके बारे में बतलाइये।

दादाश्री : एक भिखारी रोज़ आता है, उसके उपर दया नहीं आती उसका क्या कारण है? क्योंकि फिर वह स्वाभाविक हो जाता है कि यह तो रोज़ आता है। ऐसा करते-करते फिर दया उड़ (चली) जाती है।

दया यानी, हमारे (आपके) हृदय में दु:ख होता है। सामनेवाले को जो दु:ख होता हो वह हम से नहीं देखा जाए तब दया आती है। जिसे दु:ख हुआ है उसे दया नहीं आती मगर खुद को दया आती है। मतलब दया माने क्या? सामनेवाले का दु:ख देखकर खुद को दु:ख उत्पन्न होना। और फिर खुद का दु:ख मिटाने के लिए वह जो प्रयत्न करता है तब फिर कहता है, 'मैंने इसका दु:ख मिटाया।' अरे! अपने दु:ख को ही तूने मिटाया। मतलब तूने उसका कुछ नहीं किया, तूने तेरा ही किया है। यानी जिसे दया उत्पन्न होती है वह दूसरों के ऊपर दया नहीं करता लेकिन खुद को जो दु:ख उत्पन्न हुआ है उसको मिटाने का प्रयत्न करता है। बाद में उस पर उपकार जताते हैं कि, 'देख, मैंने तेरे लिए क्या कुछ नहीं किया?' अरे! तुझे दु:ख होता था इसलिए तूने किया। देख मुझे दु:ख होता है? महावीर भगवान को दु:ख होता था?

यानी दया हो वहाँ पर कोई न कोई कमज़ोरी रहती ही है और महावीर भगवान में ऐसी कोई कमज़ोरी नहीं थी। वे तो सर्वश्रेष्ठ पुरुष हो गए, पच्चीस सौ साल पहले, जो दिव्यातिदिव्य कहलाएँ ऐसे, जो संपूर्ण वीतराग कहलाएँ। वीतराग उसे कहा जाए कि जो किसी के दु:ख से दु:खी नही होते। वीतराग को कोई दु:ख दु:खरूप नहीं दिखता। वीतराग में करुणा होती है। दयालु होता है वह दु:खी होता है, करुणावाला दु:खी नहीं होता।

ज़रूरत वहाँ पहुँचने की

लोग धर्म की शुरूआत दया से करते हैं। मगर अंत में भी दया रहे तो फिर धर्म पूरा हुआ नहीं कहलाए। क्योंकि दया हमेशा परमानंद में दु:ख करे। इसलिए धर्म पूरा होने से पहले दया का एन्ड(अंत) हो जाना चाहिए। वर्ना जब तक दया का गुण रहेगा तब तक भीतर में दु:ख होगा। यानी फिर दया ही दु:खदायी हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : मगर दयालु को दु:ख हुए बगैर दया तो निकलेगी ही नहीं न?

दादाश्री : हाँ, बिना दु:ख हुए दया आती ही नहीं। खुद को दु:ख होता है इसलिए दया आती है। वीतरागता को दु:ख नहीं होता। इसलिए वीतरागों को दया भी नहीं और निर्दयता भी नहीं, वह द्वन्द्वगुण ही नहीं। मतलब, वहाँ तक पहुँचना होगा। भले ही आप

आज वहाँ तक नहीं पहुँचे हैं, उसमें हर्ज नहीं है, मगर आखिर में वहाँ तक जाना पड़ेगा। हमें रेलवे लाइन के सारे मार्ग का पता होना चाहिए कि कौन-सा मार्ग कहाँ ले जाता है!

दया कहाँ तक ज़रूरी है? जब तक अध्यात्म मार्ग पाया नहीं है, तब तक। अध्यात्म प्राप्त होने के बाद दया की ज़रूरत नहीं रहती है। यहाँ पर, 'ज्ञानी' होते ही करुणा से मिल जाते हैं। करुणा मतलब, कोई दु:खी होता हो उसके ऊपर भी करुणा और जो दु:ख दे रहा है उसके ऊपर भी करुणा। क्योंकि दोनों ही कमज़ोर हैं, इसलिए करुणा।

अंतर, अनुकंपा और करुणा में

प्रश्नकर्ता : दादाजी, अनुकंपा किसे कहलाए? क्या अनुकंपा मुख्य नहीं है?

दादाश्री : नहीं। अनुकंपा तो छोटे बच्चे को भी आती है और बूढ़े आदमी को भी आती है। और हमें करुणा रहती है। महावीर भगवान को भी करुणा रहती थी। यह महावीर भगवान का मार्ग, वह सारा करुणा का मार्ग है। आत्मज्ञान हुआ तब से सारा करुणा का मार्ग है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर अनुकंपा और करुणा में क्या अंतर है?

दादाश्री : बड़ा अंतर है। अनुकंपा कब होती है? जब हम भीतर संवेदनशील हो जाए (दूसरे का दु:ख देखकर दु:खी होना), तब। और करुणा में ऐसी संवेदना नहीं होती। भीतर कोई असर नहीं होता।

अनुकंपारूपी दु:ख जब खुद को होता है तब वह सहन नहीं होता, फिर, 'सामनेवाले का दु:ख कैसे मिटे', ऐसी अनुकंपा रहा करे। उसका दु:ख मिटे तो खुद का दु:ख मिटे। वर्ना खुद का दु:ख कैसे मिटे? सामनेवाले का दु:ख नहीं मिटाते तब तक खुद का दु:ख नहीं मिटता। और महावीर भगवान को करुणा होती थी, उनको यह देखकर दु:ख ही नहीं होता था।

वहाँ दया नहीं, केवल करुणा

एक चूहा जाता हो उसके पीछे बिल्ली जाए, वहाँ महावीर भगवान बैठे हों तो दोनों को देखा करे। भगवान को करुणा होगी लेकिन वे कानून हाथ में नहीं लेते। और दूसरी ओर कोई इन्डियन बैठा हो तो वह कानून हाथ में लेगा या नहीं लेगा? तुरंत उसका न्याय तो कर ही डाले। चूहे के पीछे बिल्ली पड़ी हो तो न्याय करे या नहीं करे? क्या न्याय करे?

प्रश्नकर्ता : बिल्ली को मारे।

दादाश्री : भगवानने बचाने को कहा था, दया रखने को कहा था, मगर निर्दयी होने को नहीं कहा था। यह तो आप चूहे पर दया करते हैं और उस बिल्ली पर निर्दयी हुए।

प्रश्नकर्ता : तो क्या करना?

दादाश्री : भगवानने ऐसी निर्दयता बरतने को नहीं कहा, इतना समझ लीजिए न आप! क्या भगवान कभी ऐसा कह सकें कि उसके ऊपर निर्दयता रखना! उन्होंने क्या किया? करुणा रखी। और लोग क्या करते हैं? अरे! बिल्ली को एक ढेला मारें। मारें या नहीं मारें? आपकी क्या मान्यता है?

प्रश्नकर्ता : ऐसा नहीं करना चाहिए।

दादाश्री : मगर लोग मारें या नहीं?

प्रश्नकर्ता : मारें।

दादाश्री : क्या उसे मारने की परवानगी दी है किसीने?

प्रश्नकर्ता : संसार के लोगों का वह सहज भाव है।

दादाश्री : हाँ, संसारी योग है न, वह मार बैठे। उसे समझ नहीं है कि मैं क्या कर रहा हूँ! क्योंकि तब उसे क्या होता है? बिल्ली को देखते ही उसके मन में ऐसा होता है कि मैं उस चूहे को बचाऊँ।

इसलिए बचाने में अंध हो गया। और फिर सामनेवाले का कितना नुकसान किया, या मैं क्या जिम्मेवारी बटोर रहा हूँ, उसका होश नहीं रहता। और फिर हमसे कहे, 'मुझे बहुत दया आई, मुझे दया बहुत आती है।' 'अरे! यह तूने दया दिखाई कि निर्दयता बरती?' आए बड़े दयालु! चूहे पर ज़रा-सी दया की और बिल्ली के दो बच्चे हैं वे बिना खाए भूखों मरे। यह तूने बहुत बड़ी निर्दयता की।

हमें दया नहीं होती। दया माने क्या? चूहे के ऊपर दया करे और दया वह राग है इसलिए द्वेष नामक गुण उत्पन्न होता है। इसलिए बिल्ली के प्रति द्वेष करे, निर्दयता जताए। यह दया कहलाए। हमें तो करुणा होती है। बिल्ली के ऊपर भी करुणा और चूहे के ऊपर भी करुणा।

करुणा, महावीर की

प्रश्नकर्ता : बिल्ली चूहे के ऊपर झपटे उस समय यदि भगवान महावीर वहाँ होते तो उन दोनों के प्रति कैसी करुणा रखते?

दादाश्री : गोशाला (महावीर भगवान का शिष्य) ने भगवान महावीर के दूसरे दो शिष्यों को जला डाला था फिर भी भगवान तो वीतराग के वीतराग ही रहे थे। तब इन चूहे-बिल्ली में हाथ डालते होंगे कहीं! जब अन्य शिष्योंने यह बिनती की, 'भगवान, यह आपके शिष्यों को जला देता है, कुछ कीजिए!' तब भगवान बोलें, 'मैं जीवनदाता नहीं हूँ, मैं मोक्षदाता हूँ।' जब शिष्यों के लिए इमोशनल (भावुक) नहीं हुए, तो चूहे के लिए होते होंगे?! लोगोंने बताया भी सही मगर अपने दो शिष्यों को जलने दिया। वर्ना ज़रा-सी दृष्टि डाली होती तो गोशाला कहाँ से कहाँ उड़ गया होता। भगवान में अगाध (अपार) शक्ति थी। मगर अपना तीर्थंकरपन खो बैठते। मगर वे नहीं खोनेवाले, बहुत पक्के। शिष्यों ने उकसाने का प्रयत्न किया, 'भगवान, आपके शिष्य, आपके शिष्य!' मगर भगवान कहाँ उकसे? वे बिलकुल उकसे नहीं। वे (अहंकार के) घोड़े पर नहीं बैठे।

प्रश्नकर्ता : भगवान महावीर की करुणा कैसे बहे?

दादाश्री : वह करुणा तो कैसी? यदि बिल्ली चूहे के पीछे पड़ी हो तो चूहे पर भी करुणा और बिल्ली पर भी करुणा। और बिल्ली के पीछे यदि कुत्ता पड़ा हो तो उसके ऊपर भी करुणा। कुत्ते के पीछे कोई मनुष्य लाठी लेकर पड़ा हो तो उसके ऊपर भी करुणा!

यानी वीतरागों का मत क्या है? वीतराग कहते हैं कि, 'हम करुणा रखते हैं'। चूहे के प्रति कैसी करुणा? कि अरे! बेचारे की जीने की इच्छा है फिर भी मार डालते हैं इसलिए उस पर करुणा आती है। वे चूहे से कहेंगे कि, 'तू तेरी दशा में से मुक्त हो रहा है। तेरा गुनाह तुझे माफ़ किया जा रहा है। तेरा हिसाब अभी चुकता हो जाएगा।' बिल्ली के ऊपर क्यों करुणा आती है? वह नया दोष उत्पन्न कर रही है, उसका फल क्या होगा, उस फल के परिणाम को देखकर उन्हें करुणा आती है। बिल्ली से कहेंगे, 'तेरी यह दशा होगी।'

अब बिल्ली अपना हिसाब बाँध रही है इसलिए फिर से उसे भुगतना होगा। अब बिल्ली हिसाब बाँधती है, मतलब, उसका चार्ज नहीं होता (नया नहीं बंधता)। लेकिन जो चार्ज है वह डिस्चार्ज रूप में (फल स्वरूप) आनेवाला है। आज आप वकील हैं और डिस्चार्ज रूप में कोई अच्छा केस लेते हैं इसलिए आपको उस केस के दो हजार मिलेंगे। ऐसा उसके किए का फल तो आएगा ही न?! उस बिल्ली को भी फल मिल जाएगा।

प्रश्नकर्ता : करुणा मतलब किसी का पक्ष नहीं लेते?

दादाश्री : हाँ, किसी का पक्ष नहीं लेते। सब

अपना-अपना भुगतेंगे, उसमें वे दखल नहीं देते। उनको रोकना करना, आदि नहीं करते। रोके-करे वे वीतराग नहीं कहलाए। और ये अक्लमंद लोग तो सारे रोकनेवालों में से हैं न?! बिल्ली को मारे भी, अरे! कैसा जन्मा है?! बड़ा दयालु! आप चूहे को कितने दिन बचाएँगे? वह तो बिल्ली का आहार है। मगर ऐसा कहकर आप बैठ मत जाना। अंदर भावना ऐसी होनी चाहिए कि बिल्ली गुनाह नहीं करे और चूहा मरे नहीं। बाहर में तो हमारे हाथ में अधिकार ही नहीं है न!

जहाँ अहंकार वहाँ नहीं होती करुणा!

प्रश्नकर्ता : सही मानों में दया कौन रख सकता है?

दादाश्री : जो कभी भी निर्दय नहीं होता हो, वह दया रख सके। यह तो लोगों को निर्दय होते देर नहीं लगती। दया तो अहंकारी गुण है जब कि करुणा निराहंकारी गुण है। कोई हम पर(आप पर) दया करता हो तो हमारे मन में हीनता लगे, चिंता हो, जब कि करुणा तो कारुण्यभाव है।

प्रश्नकर्ता : मगर दादाजी, कई लोग करुणा की बातें करते हैं और दया ही नहीं रखते।

दादाश्री : करुणा होती नहीं। करुणा हो नहीं सकती। अहंकार होता है वहाँ करुणा नहीं होती है और करुणा होती है वहाँ अहंकार नहीं होता। किसी मनुष्य को कुछ लेना-देना नहीं हो और वहाँ अपना सबकुछ व्यर्थ गँवा रहा हो तब हमारे लोग कहते हैं कि 'करुणा रखने जैसा है।' मगर उसे करुणा नहीं कही जाती। तू अहंकारी है इसलिए वह करुणा नहीं है, वह तो एक प्रकार की दया है।

प्रत्येक जीव पर करुणा रखना

प्रश्नकर्ता : कोई अच्छा मनुष्य हो उसे तरह-तरह के विचार आते रहते हैं, एक मिनट में अनेकों विचार कर डालता है और कर्म बाँधता रहता है। और मंद दिमागवाले को समझ ही नहीं होती इसलिए उसे कोई विचार नहीं होता, वह निर्दोष ही होता है न?

दादाश्री : वे समझदारीवाले समझदारी के कर्म बाँधे और नासमझीवाले नासमझी के कर्म बाँधे। नासमझीवाले के कर्म मोटे होते हैं और समझदारीवाले तो विवेक सहित कर्म बाँधे। इसलिए पहलेवाले के कर्म सारे जंगली जैसे होते है, जानवर जैसे, उनको समझ ही नहीं है, होश ही नहीं है। वह तो किसी को देखकर पत्थर मारने को तैयार हो जाए।

प्रश्नकर्ता : हमें ऐसे मनुष्य पर दया नहीं रखनी चाहिए?

दादाश्री : रखनी ही चाहिए। जो नासमझ हो उनके प्रति दयाभाव रखना चाहिए। उसकी कुछ हैल्प (मदद) करनी चाहिए। दिमाग की किसी खराबी के कारण बेचारा ऐसा है, उसमें फिर उसका क्या कसूर? यदि वह पत्थर मारे, तो हमें उसके प्रति बैर नहीं किंतु उस पर करुणा रखनी चाहिए।

दया है अहंकारी गुण

प्रश्नकर्ता : क्या दया में अहंकार होता है?

दादाश्री : दया वह बड़ा अहंकारी गुण है। वह अहंकारी गुण कैसे है? दया वह द्वन्द्वगुण है। द्वन्द्वगुण सारे अहंकारी गुण हैं। द्वैत भी अहंकारी और अद्वैत भी अहंकारी गुण। लोग अद्वैत की दुकानें निकालते हैं, उसका कोई लाभ नहीं है। क्योंकि वह द्वन्द्व गुण है, द्वैत-अद्वैत। यानी जो दयावाला हो उसे निर्दयता के विकल्प आते हैं।

द्वन्द्व यानी, दया हो उसमें निर्दयता अवश्य भरी पड़ी होती है। जब निकले तब पता चले। तब सारा बाग़ उजाड दे। सारे सौदे कर डाले। घर-बार, बीवी-बच्चे सबकुछ दाँव पर लगा दे। सारा जगत द्वन्द्वगुण में है। जब तक द्वन्द्वातीत दशा प्राप्त नहीं हुई है तब तक जगत के लिए दया का गुण प्रशंसनीय वस्तु है। क्योंकि उसकी वह नींव है। फिर भी दया हमारी

सेफसाइड (सुरक्षा) हेतु रखनी है, भगवान की सेफसाइड के लिए नहीं। लोगों की दया खाने जो निकल पडते हैं वे खुद ही दया के पात्र हैं। अरे! तू खुद ही अपनी दया खा न? दूसरों की दया क्यों खाता है? कुछ साधु, संसार के लोगों की दया खाते हैं कि, 'अरे! इन लोगों का क्या होगा?' अरे! उनका जो होना होगा सो होगा मगर तू उनकी दया खानेवाला कौन? तेरा क्या होगा? तुम्हारा ही जब तक ठिकाने नहीं लगा है वहाँ लोगों की क्यों चिंता करते हो? यह तो बड़ा भारी कैफ कहलाए। यानी संसार के लोगों का कैफ तो तेल और शक्कर की लाइन में आठ घंटे खड़े खड़े रहने पर उतर जाए, मगर इनका कैसे उतरे? उलटे बढ़ता जाए। निष्कैफी का मोक्ष होता है ऐसा भगवान ने कहा है। कैफ तो अति भारी सूक्ष्म अहंकार है। वह बहुत मार खिलाए। यह स्थूल अहंकार तो कोई भी दिखा सकता है। कोई कहनेवाला निकल आएगा कि, 'ऐसे सीना तानकर क्या घूम रहा है? ज़रा झुक न?' इस पर वह ठिकाने आ जाएगा। लेकिन यह सूक्ष्म अहंकार- 'मैं कुछ जानता हूँ, मैंने कुछ साधन प्राप्त कर लिया है', ऐसा कैफ कभी जानेवाला नहीं है। अरे! 'जाना'(जान लिया)किसे कहलाए? ज्ञानप्रकाश हो, तब। क्या प्रकाश में ठोकर लगे? मगर यह तो कदम-कदम पर ठोकरें खाता है, उसे 'जाना' कैसे कहलाए? खुद ही जब अज्ञानदशा में ठोकरें खाता हो, उसे दूसरों की दया खाने का क्या अधिकार है? ज्ञानीपुरुष में दया नाम का गुण नहीं होता, उनमें अपार करुणा होती है।

करुणा दृष्टि से देखा जगत निर्दोष

सारे जगत में हमें कोई दोषी दिखता नहीं है। मेरी जेब काटे तब भी मुझे दोषी नहीं दिखता। उलटे उसके ऊपर करुणा छूटे, हमारे में दया नहीं होती। दया मनुष्यों में होती है, 'ज्ञानीपुरुष' में दया नहीं होती, हम द्वन्द्व से परे हो गए होते हैं। हमारी दृष्टि ही निर्दोष हो गई होती है। यानी तत्त्वदृष्टि होती है। यह अवस्था दृष्टि नहीं होती। सभी में सीधे आत्मा ही दिखाई दे।

इसलिए मुझे तो चोर के साथ, जेबकतरों के साथ सबके साथ एडजस्टमैन्ट(समायोजन) होता है। चोर के साथ हम बात करें तो वह भी जाने कि ये करुणावाले हैं। हम चोर से तू गलत है ऐसा नहीं कहते, क्योंकि उसका वही 'व्यू पोइन्ट'(दृष्टिकोण) है। और लोग उसे नालायक कहकर गालियाँ दें। तब ये वकील गलत नहीं है क्या? 'बिलकुल झूठा केस मैं जीता दूँगा' ऐसा कहे। क्या वे ठग नहीं कहलाएँ? चोर को लुच्चा कहे, मगर ये जो बिलकुल झूठे केस को सच्चा कहे, उसका संसार में विश्वास कैसे किया जाए? किंतु फिर भी उसका सब चलता है न! किसी को भी हम झूठा नहीं कहते। वह उसके 'व्यू पोइन्ट' से करैक्ट ही है। मगर उसे सच्ची बात समझाएँगे कि यह चोरी करने का फल क्या आएगा?

केवल करुणा, कल्याण हेतु

हम तो सामनेवाले को सही राह पर मोड़ने के लिए आए हैं। मुझे दुनिया में कुछ नहीं चाहिए। ये तो कहीं के कहीं उलटी राह चले जा रहे हैं और इसके कारण इतने सारे दुःख आते हैं। उलटी राह चलते हैं और ऊपर से जिम्मेदारी लेते हैं। यदि दुःख नहीं आतें तो बात अलग है। सुख पा कर उलटी राह जाता हो तो बात अलग है। पर यह तो इतने दुःख सहन करता है और उलटी राह चलने की जिम्मेदारी लेता है। इसलिए हमें करुणा आती है कि यह तू किस अंधेरी राह पर चला जा रहा है!

दुःख से कैसे मुक्ति पाएँ, ऐसी करुणा

मनुष्यजन्म यानी मोक्ष में जाने का समय। मगर ऐसा समय आया हो तब वह तो (पैसे) इकट्ठा करने में जुटा हो, वह पापानुबंधी पुण्य है। उसमें पाप ही बँधता रहता है, मतलब वह भटकानेवाला पुण्य है।

पूर्व के पुण्य से आज सुख भोगता है। मगर भयंकर पाप के अनुबंध बाँधता है। किसी सेठ का आलीशान बंगला हो लेकिन वे सुख से बंगले में नहीं

रह पाए। सेठ सारा दिन पैसों के चक्कर में बाहर होते हैं। जबकि सेठानी मोहबाज़ार में सुंदर साडियों में उलझी होती है। सेठ की बेटी मोटर लेकर घूमने को निकली हो। नौकर अकेले घर पर होते हैं और इस तरह सारा बंगला गैरों के हवाले हो गया हो। पुण्य के आधार पर बंगला मिला, मोटर मिली, फ्रीज़ मिला। ऐसा पुण्य होते हुए भी पाप के अनुबंध बाँधे ऐसे करतूत होते हैं। लोभ और मोह में समय व्यतीत होता रहे और भोग भी नहीं सकें। पापानुबंधी पुण्यवाले लोग तो विषय की लूटपाट में ही लगे हैं।

इसलिए तो बंगले हैं, मोटरें हैं, वाइफ है, संतान हैं, सब होते हुए भी सारा दिन हाय-हाय, कि, पैसा कहाँ से पाऊँ? यानी सारा दिन निरे पाप ही बाँधा करते हैं। इस भव में पुण्य भोगता है और आनेवाले भव का पाप बाँध रहा है। सारा दिन दौड़-धूप, दौड़-धूप। और वह भी ऐसा कि, बाइ (खरीदो), बॉरो (उधार लो), और स्टील (चूरा लो)। कोई कानून नहीं। बाइ, या फिर बॉरो, या फिर स्टील (ले सको तो खरीदो, वर्ना उधार लो, नहीं तो चुरा लो) किसी भी दृष्टिबिंदु से यह हितकारी नहीं कहलाए।

इस समय इर्द-गिर्द पुण्य बहुत बड़ा दिखाई देता है, पर वह सब पापानुबंधी पुण्य है। यानी पुण्य है, बंगले हैं, मोटरें हैं, घर पर सारी सुविधाएँ हैं, वह सब पुण्य के आधार पर है। मगर वह पुण्य कैसा है? उस पुण्य में से विचार बुरे आते हैं, कि, किस का ले लूँ? कहाँ से लूट लूँ? कहाँ से जमा करूँ? किसका भोगूँ? मतलब, बिना हक का भोगने की तैयारियाँ होती हैं। बिना हक की लक्ष्मी ऐंठ लेना, वह पापानुबंधी पुण्य है।

कुछ लोग तो छोटे स्टेट के ठाकुर हों ऐसी शान-शौकत के साथ जीते हैं। करोडों रुपये के फ्लेट में रहते हैं। मगर ज्ञानी क्या देखते होंगे? ज्ञानी को करुणा आती है बेचारों के लिए। जितनी करुणा बोरिवलीवालों (मुंबई में रहते मध्यम परिवार के लोग) पर आती है उतनी इन मलबार हीलवालों (मुंबई में रईसलोग जहाँ पर रहते है) पर आती है, ऐसा क्यों?

प्रश्नकर्ता : क्योंकि यह तो पापानुबंधी पुण्य है।

दादाश्री : पापानुबंधी पुण्य तो है ही, मगर उन लोगों की पुण्याई बर्फ के जैसी है। जैसे बर्फ पिघलती है वैसे पुण्याई निरंतर पिघलती ही रहती है, ज्ञानीओं को दिखाई दे कि यह पिघल रही है। मछलियाँ छटपटा रही हो वैसे छटपटा रहे हैं। उसकी तुलना में बोरिवलीवालों की पानी जैसी पुण्याई, फिर पिघलना कहाँ रहा? और यह तो पिघल रही है।

उन भोगनेवालों को यह पता ही नहीं है, और जहाँ इतनी सारी कुढ़न और बेकरारी हो, वहाँ भोगने का रहा ही कहाँ है? आज इस कलियुग में भोगना कैसा?

मलबार हिल जितना पुण्य हो मगर बर्फ का पहाड़ है वह पुण्य। बड़े मलबार हिल जितनी बर्फ हो मगर दिनोंदिन क्या होता रहेगा? चौबीसों घंटे पिघलती ही रहे निरंतर। मगर उनको खुद को मालूम नहीं है, इन मलबार हिल के रहनेवालों को(पैसेवालों को), टॉप क्लास के लोगों को पता नहीं है कि उनका क्या हो रहा है? दिन-रात पुण्याई पिघलती ही रहती है। यह तो करुणा खाने जैसे हाल है। इसका परिणाम क्या होगा यह उन्हें मालूम नहीं है इसलिए यह सब चलता है। यह तो पापानुबंधी पुण्य है। कहाँ से पैसे जमा करूँ? कहाँ से विषयों का सुख भोग लूँ? बस, उसी के खयालो में डूबे हुए हैं। यह करूँ, वह करूँ, सारा दिन, हाय पैसा! हाय पैसा!! लेकिन देखिये, बड़े-बड़े पुण्य के पहाड़ पिघलने लगे हैं। वह पुण्य खतम हो जाएगा, फिर जैसे थे, दोनों हाथ खाली के खाली। फिर चार पैरों (पशुयोनि) में जा कर भी ठिकाना नहीं मिलेगा। इसलिए ज्ञानीओं को करुणा आती है कि 'अरे! इन दुःखों से छूटें तो अच्छा। कोई अच्छा संयोग आ मिले तो अच्छा।'

अपार करुणा, ज्ञानी की

हम तो कहते हैं कि सारे जगत के दु:ख हमें हों। आपमें अगर शक्ति हैं तो आपके सारे दु:ख, ज़रा-सा भी अंतरपट रखे बगैर अर्पण कर जाइये। फिर यदि दु:ख आए तो हम से कहना। मगर इस काल में ऐसे लोग भी मुझे मिले हैं जो कहते हैं कि 'दु:ख दे दें(अर्पण कर दें) तो हमारे पास क्या रहे?' मगर उसे पता नहीं है कि वह खुद ही अनंत सुख का स्वामी है इसलिए यदि दु:ख दे दिया तो निरा सुख ही रहेगा अपार। मगर किसी को दु:ख तक अर्पण करना भी नहीं आता है।

'मनुष्य रूपेण मृगाश्चरंति' ऐसा कहीं लिखा गया है। वहाँ मारे डर के मृग शब्द का प्रयोग किया है। बत्तीस अंक मिलने पर गधा होता है और तैंतीस अंक पर मनुष्य होता है। यानी एक अंक तो देह में खर्च हो गया तो बाकी रहा क्या? अंक तो गधे के ही न? फोटो मनुष्य की निकले मगर भीतर से तो गधा ही रहा न? फोटो मनुष्य की निकले मगर भीतर गुण तो पाशवता के ही हों तो वह पशु ही है। हम साफ सुना दें। क्योंकि हम किसी ताक में नहीं हैं, हमें कोई लालच नहीं है। आपका हित ही हमें देखना है। आपके ऊपर हमें अपार करुणा होती है इसलिए ही हम नग्न सत्य बता देते हैं।

निष्कारण करुणा, ज्ञानी की

प्रश्नकर्ता : दादाजी, क्या वह निष्कारण करुणा कहलाए?

दादाश्री : हाँ, वही, और क्या? यह तो निष्कारण करुणा! सबके आत्मा पर ही हमारी दृष्टि होती है, उनके पुद्गल पर दृष्टि नहीं होती। फिर भी व्यवहार को हम सँभालते हैं कि सत्संग के लिए यह मनुष्य हितकारी है, इसलिए 'आइये, पधारिये' ऐसा कहते हैं। अन्य लोगों का हित हो ऐसे लोगों को हम बुलाते हैं। हमें ऐसा व्यवहार रखना पड़े। और जो तीर्थंकर भगवान होते हैं वे ऐसा नहीं करते। उनको ऐसी खटपट नहीं होती और हमारी तो खटपट (कल्याण हेतु) होती है।

प्रश्नकर्ता : वह खटपट का विभाग आपने खोल रखा है, इसलिए तो हम सभी आपके पास आ सकते हैं न?

दादाश्री : हाँ, वही। उसी को लेकर तो मैं मोक्षमार्ग में रुका हुआ हूँ, कि लोगों का मेरे जैसा कल्याण कैसे हो, बस उतना ही, उसके लिए खटपट। खटपट भी उसी की खातिर! यह सारा व्यापार ही उसीका! और लोगों का भी कल्याण हो जाए! लोगों को यहाँ पर वीतरागता देखने को मिले।

हेतु, जगत कल्याण का

यह सारा जगत, जैसे शकरकंद भट्ठी में रखते हैं, वैसे चारों ओर से भूना जा रहा है। फॉरीनवाले भी भूने जा रहे हैं और यहाँ के लोग भी भूने जा रहे हैं। 'शकरकंद भूने जा रहे हैं' ऐसा एक आदमी से कहा तब वह कहने लगा, 'दादाजी, आप कहते हैं शकरकंद भूने जा रहे हैं मगर अब तो सुलगने भी लगे हैं। जो पानी था वह खलास हो गया और शकरकंद जलने लगे हैं।' मतलब ऐसी दशा है। हमारे सत्संग का हेतु क्या है? जगतकल्याण करने का हेतु है। ऐसी भावना व्यर्थ नहीं जाती है।

वीतराग किसी से लड़े नहीं है। कितने सयाने हैं वीतराग! वीतराग तो मूल से ही लड़नेवालो में से नहीं हैं, उनके शिष्य दगा करें पर वे लड़े नहीं। हमारा भी यही ध्येय है न? किंतु यह तो हमारे हिस्से में आया है। चौबीस तीर्थंकर यह माल (इस कलिकाल के सारे जीव) छोड़ गए कि जाओ, पीछे 'दादा' होनेवाले हैं, वहाँ जाओ। इसलिए हमारे हिस्से यह आया है। हमारा उपालंभ तो करुणा का उपालंभ है। हमारा स्वभाव तो वीतराग है। मगर 'जैसे रोग वैसा औषध, श्रीमुख वाणी झरते'। यानी जैसा रोग हो वैसी यह नैमित्तिक वाणी निकले।

हमारी कारुण्यबुद्धि से शब्द बहुत कड़े निकलें और काल भी तो ऐसा है! यदि फ्रीज में ठंडी की हुई सब्ज़ी हो तब फिर वह सब्ज़ी कैसे पके? फिर सोडा आदि डालने पर सब्ज़ी पकती है। वैसे ही हमें भी सोडा आदि सब डालना पड़ता है। हमें कहीं ऐसा अच्छा लगता होगा क्या? हमारी यह वीतराग वाणी ही सारा कचरा साफ कर देगी।

करुणासभर वाणी, कल्याण हेतु

हम तो कहते हैं कि तू अपना भावमरण बचा। तू तेरा भावमरण नहीं हो, भावहिंसा नहीं हो यह देख। जब आप किसी पर क्रोध करें तब उस व्यक्ति को तो दु:ख होगा तब होगा, मगर तब आपकी तो एकबार हिंसा हो गई, भावहिंसा। इसलिए भावहिंसा बचाइये ऐसा भगवानने कहा। इतना ही कहा है, इसके आगे लम्बा कहा नहीं है। मैं क्या कहता हूँ यह 'व्यू पोइन्ट' आपकी समझ में आता है? बाहर कितना क्या से क्या हो गया है सारा? बर्तन ऐसे मैले हो गए हैं कि कौन-सा एसिड इस्तेमाल करना यही मेरी समझ में नहीं आता है। अब इसे कैसे चमकाए जाए? बहुत साल नहीं बीते, सिर्फ पच्चीस सौ साल ही हुए हैं भगवान महावीर को गए, उसमें पाँच सौ साल तो सब ठीक रहा था और दो हजार सालों में इतनी जंग लग गई?! कृष्ण भगवान को गए इक्यावन सौ साल हुए, इतने में तो कितनी जंग लग गई?! यह हमें कठोर वचन क्यों बोलने पड़ते हैं? हमारी, ज्ञानीपुरुष की ऐसी कठोर वाणी नहीं होती, मगर अत्यंत करुणावश होकर, सामनेवाले का रोग निकालने हेतु ऐसी करुणासभर वाणी निकलती है।

हमें तो अपार करुणा होती है। हमें सभी निर्दोष ही दिखाई दें। क्योंकि हम खुद निर्दोष दृष्टि करके सारे जगत को निर्दोष देखते हैं। तात्त्विक दृष्टि से देखा जाए तो दोष किसी का भी नहीं है, क्योंकि संयोग ही ऐसे हैं।

वीतराग कोड़े बरसाए, किंतु करुणा से

फ़ैक्ट (सच्चाई) वस्तु जाननी नहीं चाहिए? ये लौकिक बातें कब तक जानेंगे? अलौकिक को जाने (जानना) बगैर इन सब से छुटकारा नहीं होगा, भय नहीं जाएगा। वीतराग होना है तो भय जायेगा, वर्ना जगत में भय रहा ही करे। सबको भय लगता है। यदि किसी ने नई साइन्टिफिक(वैज्ञानिक) खोजबीन की हो और रात में हमारे साथवाले कमरे में उसको सजाया हो और यदि फिर वह विचित्र शब्द निकाले तो हम समझें कि भूत आया, इसलिए सारी रात नींद नहीं आए, भड़क और भय रहे। अब, ऐसा कब तक चलेगा?

हमें भय क्यों नहीं है? क्योंकि भीतर हमारा बिलकुल साफ है। जिनका बिलकुल साफ हो, उसको जगत में भय कैसा? भय तो किसे होता है कि भीतर गोलमाल हो उसे भय होता है, वर्ना इस जगत में भय कैसा?

कोई लालच हो ऐसा कोई जब यहाँ आए तो उसके आते ही मैं उसे फटकारूँ कि, 'सीधा रहना। अनंत अवतार से मार खाता आया है मगर फिर भी लालच नहीं छूटता। यदि यहाँ आने के बाद भी तेरा ठिकाना नहीं लगता, तो फिर तेरा यहाँ आना किस काम का?' हमारी, 'ज्ञानीपुरुष' की वाणी वीतराग वाणी होती है यानी वीतराग कोड़े बरसाते हैं। वे बहुत लगते हैं, असर बहुत करें, मगर दिखाई नहीं देता।

कड़ेपन में भी करुणा ज्ञानी की

प्रश्नकर्ता : कईबार आप हमसे कहते हैं कि, 'तू कमअक़्ल है, तेरे में अक़्ल नहीं है, तू बोरे जैसा है, बेचने जाएँ तो चार आने भी नहीं आए।' तब हमें ऐसा लगता है कि आप करुणा बरसा रहे हैं।

दादाश्री : ऐसा है न कि हमारा दिमाग़ खराब नहीं हो गया है कि ऐसी वाणी निकले। ऐसी वाणी बोलने में हमें, हमारे भीतर बड़ा जबरदस्त एडजस्टमैन्ट

लेना पड़ता है। क्योंकि ऐसी वाणी नहीं बोल सकते। फिर भी हम बोलें, तब सामनेवाले का पुण्य जागा हो तब हमसे बोली जाए और तब हम आपको कोई कड़ा शब्द कहें जो आपका रोग निकाल दें। वे शब्द ही आपका रोग भगा दें।

कुछ लोग अक्सर कहा करते हैं कि 'हमें कहिये, हमें कहिये (डाँटिये)।' अरे! कैसे कह सकते हैं? यह टेपरिकार्डर बोलता है। मेरे हाथ में सत्ता ही नहीं रही। आपको कहना, वह मेरे हाथों में ही कहाँ है?

प्रश्नकर्ता : आप सामनेवाले के उत्कर्ष हेतु डाँटें तो उसमें गलत क्या है?

दादाश्री : हम उदय अनुसार चलते हैं, डाँटते नहीं हैं।

बजे टेपरिकार्डर करुणावश

यह जो टेपरिकार्डर (दादाश्री की वाणी) बजता है, उसमें कितने राग-द्वेष होंगे?

प्रश्नकर्ता : राग-द्वेष होते ही नहीं न!

दादाश्री : हाँ, वर्ना कड़ा शब्द हो तो उसके पीछे द्वेष होता है। मीठे शब्द हों तो उनके पीछे राग होता है। फिर ये कड़े शब्द क्यों निकलते हैं?

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले का रोग निकालने, उसका कल्याण करने के लिए।

दादाश्री : एक बहुत बड़े वकील थे। वे कहते कि 'यह दादाजी के साथ मेरा कोई ऋणानुबंध नहीं है, किसी प्रकार से लेना-देना नहीं है। फिर भी धन्य है यह दादाजी को, कितनी करुणा बरसाते हैं। मेरे अपने हित के लिए यह क्या बोले जा रहे हैं! दिमाग पर कितना ज़ोर दे रहे हैं!' अब ऐसे समझदार से हम क्या कहें फिर? इसका नाम करुणा कहलाए, कि लोगों का कैसे कल्याण हो! फिर चाहे वह कड़े शब्दों से होता हो तो कड़े शब्दों से, नरम शब्दों से होता हो तो नरम से, किसी भी प्रकार से, जिससे हो उससे, परंतु कल्याण करना है।

प्रश्नकर्ता : इसके माने यह है कि जिस पानी से मुँग पकते हैं उस पानी से पकाइये।

दादाश्री : यानी, तानसा (नदी) का पानी आता है तो उससे पकाइये। वह नहीं मिले, तो फिर कुआँ हो तो उसके पानी से पकाइये। वह भी नहीं मिले, तो किसी के यहाँ पशुओं को पिलाने के लिए जो पानी पाँच-पाँच दिन से पड़ा रहा हो, वह पानी मिले तो उससे पकाइए और वह भी नहीं मिले तो गटर के पानी से पकाइये। कोई भी पानी रहा, मुँग पकाने से काम है। क्या मुँग मना करेंगे? नहीं। तब सारी झँझट पकानेवाले की है न?

मतलब यह करुणा कहलाए। एक खराब विचार तक मुझे नहीं है क्योंकि निर्दोष दृष्टि से देखता हूँ। आपको सिखलाता भी हूँ कि सारा जगत निर्दोष है और इग्ज़ैक्टली ऐसा ही है। कोई कहेगा कि, 'प्रुफ (प्रमाण) दीजिए' तो सौ फिसदी प्रुफ देने को तैयार हूँ। यह जो खुद प्रमाण दे सकते हैं, तब उनकी प्रतीति में क्या होगा? केवल प्रतीति में ही नहीं, वर्तन में भी ऐसा ही होता है। तभी आपको प्रतीति बैठेगी। प्रतीति बैठ गई तो भी बहुत हो गया। वर्तन में नहीं आए उसमें हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : प्रतीति बैठ ही गई है, दादाजी। सब को बैठ गई है। करीब सभी जानते हैं कि जगत निर्दोष है।

दादाश्री : वही तो मैं बता रहा हूँ। मैं लोगों को सौ फीसदी प्रमाण देने को तैयार हूँ। वे खुद स्वीकार करे कि, 'यह कम्पलीट प्रमाण है।' धमकाकर नहीं। मगर उस समय, बड़ी सयानी भाषा का प्रयोग करूँ क्योंकि प्रमाण जुटाना है न! वह भाषा भी मुझे आती है और यह भी आती है। दोनों मालूम हैं। दूसरी, मीठी भाषा मुझे नहीं आती होगी क्या?

प्रश्नकर्ता : आपको बड़ी मीठी भाषा आती है।

दादाश्री : सब आता है, क्योंकि यह मेरी वाणी नहीं है, यह टेपरिकार्डर है।

प्ररूपण, कषाय सहित

यह वाक्य समझना होगा कि, 'कषाय सहित प्ररूपण करना यह नर्क की निशानी है। '

बहुत स्ट्रोंग (भारी) वाक्य बोलता हूँ। मगर इसके पीछे हमारी करुणा है। अरे! यह नर्क में जाने का कहाँ से खोज निकाला? प्ररूपण करने बैठ गए? मानों खुद का कल्याण हो गया इसलिए लोक कल्याण करने निकल पड़े! (खुद में) कषाय है या नहीं? कषाय है और प्ररूपण करते हैं तो नर्क में जाएँगे।

फिर मुझसे कहते हैं, 'हमने तो आजतक प्ररूपण किया।' मैंने कहा, 'भगवान के पास जा कर अब इसके लिए माफ़ी माँग लीजिए, किस आधार पर प्ररूपण करते हैं? भीतरी तौर पर तो अभी सारा अधूरा है, बोलने से पहले अंदर तो चिढ़ जाते हैं।'

अभी मुझे कोई थप्पड़ मारे और मैं चिढ़ जाऊँ, तो फिर मैं ज्ञानी कैसे कहलाऊँ? मुझे गालियाँ दें, मेरे कपड़े उतार लें, तब भी मेरे चेहरे पर यदि शिकन आए, तो मैं ज्ञानी कैसे कहलाऊँ? सारे जगत की समता ज्ञानी में होती है। रौंद-रौंदकर मारे, कुछ भी करे तब भी समता रखें और साथ-साथ आशीर्वाद दें।

कषाय मतलब क्रोध-मान-माया-लोभ, वे जब तक रहें हों तब तक उपदेश करना गुनाह है। कषायों से परे तो और कोई भी नहीं है। आधे कषाय भी गए नहीं है अभी, पूरे सारे कषाय हैं, संपूर्ण कषायी हैं। वह तो जब छेड़ें तब पता चले। छेड़ने पर क्या दिखाई दे?

प्रश्नकर्ता : क्रोध आ जाए।

दादाश्री : और फन फैलाये या नहीं फैलाये? जो सभी सुननेवाले बैठे हों वे भड़क जाएँ या नहीं? 'अरे, फन फैलाया' कहेंगे। यानी, यदि कोई झिडकाये तो फन फैलाये, और जो फन फैलाये वे उपदेश के लायक होते होंगे? झिडकाये, मार-पीट करे तब भी फन नहीं फैलाये, समता रहे तब वे उपदेश कर सकें। जब तक 'मैं' खड़ा है तब तक क्या वे उपदेश के लायक हो सकते हैं? जिन में क्रोध-मान-माया-लोभ दिखाई नहीं दे, 'मैं' दिखाई नहीं दे, वहाँ पर बात सुनना, तब मोक्ष होगा वर्ना मोक्ष होनेवाला नहीं है।

यह करुणा कहलाए

लोगों को बोलना कहाँ आता है?! अभानावस्था में बोलें। उसमें न तो उनका इरादा होता है, न कोई इच्छा। इन जीवों को समझ ही नहीं होती कि क्या बोलना है? खुद की पत्नी का भी उलटा बोले। खुद का भी उलटा बोले 'मैं नालायक हूँ, बदमाश हूँ,' ऐसा भी बोले। बिना होश के बोलें। उसे मन में जमा नहीं रखना। 'लेट गो' करना (छोड़ देना) और चलने देना। यह करुणा कहलाए। करुणा किसे कहा जाए? सामनेवाले की मूर्खता पर प्रेम रखना, उसे। लोग मूर्खता पर बैर रखते हैं, यह सारा जगत बैर रखता है।

प्रश्नकर्ता : जब बोलते हों तब नहीं लगता कि मूर्खता कर रहे हैं।

दादाश्री : उन बेचारों के हाथ में सत्ता ही नहीं है। उनकी टेपरिकार्डर बज़ती रहे। हमें तुरंत पता चल जाए कि यह टेपरिकार्डर है। यदि जिम्मेदारी की समझ होती तो वे बोलते नहीं और टेपरिकार्डर भी नहीं बजता।

शब्दों के पीछे बही करुणा

ये सभी जो उपदेश करते हैं कि, 'ऐसा करो, वैसा करो', वे लोग जब बात खुद पर आए तो चिढ़कर खडे रहें। यह तो उपदेश की बातें किया करते हैं। हकीक़त में उपदेश करने का अधिकार

किसका है? जो चिढ़ता नहीं हो, उनको यह सब उपदेश करने का अधिकार हैं। यह तो ज़रा-सा मुँह पर कह दिया तो तुरंत खफा हो जाए कि, 'मेरे जैसा जानकार कौन है दूसरा? मैं ऐसा हूँ, मैं वैसा हूँ।' यानी भ्राँति में ही बोला करे, 'मैं, मैं...' इसलिए तो सुधरता नहीं है न!

यह तो वीतराग मार्ग कहलाए, बहुत ही जिम्मेदारीवाला मार्ग। एक शब्द तक बोलना वह बहुत बड़ी जिम्मेदारी मोल लेने के बराबर है। उपदेशकों की तो बहुत जिम्मेदारी है इस समय। पर लोग समझते नहीं, जानते नहीं इसलिए उपदेश किया करते हैं। अब आप (खुद) उपदेशक हैं या नहीं, यह अपने आप को तलाश लीजिए। क्योंकि उपदेशक आर्तध्यान-रौद्रध्यान से मुक्त होना चाहिए। शुक्लध्यान नहीं हुआ हो तो भी हर्ज नहीं है, क्योंकि धर्मध्यान की विशेषता बरतती है। मगर यदि आर्तध्यान और रौद्रध्यान होते रहते हैं तो जिम्मेदारी खुद की है!

इसलिए मुझे कहना पड़ा कि लोग तो व्याख्यान किया करते हैं मगर केवल स्वाध्याय करने का अधिकार है आपको। उपदेश करने का अधिकार नहीं है। यदि फिर भी उपदेश करेंगे तो यह उपदेश कषाय सहित होने के कारण नर्क में जाएँगे। सुननेवाला नर्क में नहीं जाएगा। मुझे, ज्ञानी होने पर भी कड़े शब्द बोलने पड़ते हैं उसके पीछे कितनी करुणा होगी? ज्ञानी को कड़ापन दिखाने की क्या ज़रूरत? जिन्हें अहर्निश परमानंद, अहर्निश मोक्ष बर्ते हैं, उन्हें कड़ा होने की क्या ज़रूरत हो सकती है?! मगर ज्ञानी होने पर भी ऐसा कड़ा बोलना पड़ता है कि, 'सावधान रहना, स्वाध्याय करना।' आप, लोगों से ऐसा कह सकते हैं कि, 'मैं स्वाध्याय करता हूँ, आप सुनिये।' मगर कषाय सहित उपदेश नहीं कर सकते।

वे बोल निकले कारुण्य झरने में से

नियम ऐसा है कि किसी भी मनुष्य से आप ज्ञान की बात कर सकते हैं। मगर वे ज्ञान (आत्मज्ञान) नहीं ले सकें ऐसे हों, ठंडे हों तो आप ढीला छोड़ना। वीतराग होना। मगर इसके पीछे करुणा है कि, 'यहाँ तक आए हैं तो इस ज्ञान को पा लीजिए न। यह इतना बुखार (दु:ख) है फिर भी दवाई नहीं पीते, दवाई तैयार है।' मगर ऐसा कहना ठीक नहीं कहलाए इसलिए फिर उसका प्रतिक्रमण करना पड़े। इसे भगवान ने करुणा के प्रतिक्रमण कहे हैं।

हम तो वीतराग ही होते हैं। हमें राग-द्वेष नहीं होता। और कभी भूल से उसके प्रति ज़रा-सा भी अभाव हो जाए तो हमारे पास प्रतिक्रमण की दवाई होती ही है, इसलिए तुरंत ही दवाई कर डालते हैं।

करुणा के प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : जब आप किसी की मसख़री करें तब आप से प्रतिक्रमण तो 'ऑन द स्पोट' (तत्क्षण) हो जाते होंगे न?

दादाश्री : हाँ, उसमें मेरा बुरा भाव नहीं होता मगर फिर भी वह हास्य कहलाए, हास्य नाम का कषाय कहलाता है। मसख़री नहीं करते हैं फिर भी वह हास्य नाम का कषाय कहलाता है। वह बेचारा भोला है इसलिए उसकी मसख़री करते हो न? मगर हम प्रतिक्रमण कर लें।

यानी हमें भी किसी की मसख़री करें तब गम्मत होती है ज़रा। मगर हम जिसकी मसख़री करें, वे मज़बूत तो होंगे ऐसा हमें मालूम है। इसलिए हम गम्मत किया करें।

प्रश्नकर्ता : मगर इस भाई को लेकर जो हास्य सर्जित हुआ तो उसका प्रतिक्रमण वह कैसे?

दादाश्री : हाँ, वे करुणा के प्रतिक्रमण कहलाएँ, उनको आगे बढ़ाने के लिए। ये अन्य सभी हम से प्रतिदिन कहा करते हैं कि, 'हमसे क्यों कुछ नहीं कहते हैं?' मैंने कहा, 'तुमसे नहीं कहा जाए।' वे आगे बढ़ाने योग्य नहीं है। वे अपने आप आगे बढ़े ऐसे हैं। वे समझदारी से 'ग्रास्पिंग'(ग्रहण) कर सके ऐसे

हैं। मगर हमें प्रतिक्रमण करना पड़े! यह तो अजूबा ही है न?

प्रश्नकर्ता : मगर ऐसा तो आप करुणा भाव से बोलते है न!

दादाश्री : है करुणा भाव से ही, मगर करुणा भाव से भी ऐसा नहीं होना चाहिए। यों तो हमारी वाणी स्यादवाद ही कही जाए क्योंकि किसी धर्मवालों को किंचित्मात्र दु:ख नहीं हो ऐसा मेरा यह वर्तन होता है और पक्षपात नहीं होता है किसी जगह।

किंतु अब किसी धर्म के लिए यह जो कहना पड़ता है, कि 'यह वाज़िब नहीं है,' ऐसा कहा कि वहाँ स्यादवाद चूके। फिर भी, सही मार्ग पर चढ़ाने के लिए ऐसा बोलना पड़ता है। मगर भगवान क्या कहते हैं? यह भी वाज़िब है और वह भी वाज़िब है, चोरने चोरी की वह भी वाज़िब है, इसकी जेब कटी वह भी वाज़िब है। भगवान तो वीतराग, दखलंदाज़ी नहीं करते। और हमारी तो खटपट सारी, हमारे हिस्से में यह खटपट आई है।

प्रश्नकर्ता : मगर वह खटपट भी हमारा रोग निकालने हेतु ही है न?

दादाश्री : हाँ, लोगों को तैयार करने के लिए। इसमें हेतु अच्छा है। हमारा हेतु हमारे खुद के लिए नहीं है, सभी के लिए है।

कड़वे शब्द, करुणा से भरे

एक दिन हम साधुओं से यह सारी बात करते थे, जबरदस्त कड़ाई से कह रहे थे। तब एक भाई ने उनसे कहा कि, 'यह दादा भगवान आपको इतना सारा बोलते हैं?' तब उन्होंने उस भाई से कहा, 'यह आपकी समझ में नहीं आएगा, उसके पीछे करुणा है। क्योंकि जिन्हें कोई लड़ाई-झगडा नहीं है, कोई लेना नहीं, कोई देना नहीं, जो मोक्ष के संपूर्ण आराधक हैं, वे जब ऐसा कहें तो उनके ऐसा कहने के पीछे जबरदस्त करुणा है।'

प्रश्नकर्ता : कितनी करुणा होगी वह?

दादाश्री : करुणा का ही अवतार है यह! कारुण्यमूर्ति है यह! हाँ, चाहे किसी भी तरह हल निकाल लेना अपना।

यह तो जैसा है वैसा कहना पड़ता है और वह भी अत्यंत करुणा जागने से वाणी निकलती है। वर्ना हमें, ज्ञानीपुरुष को तो ऐसे कड़वे शब्द इस्तेमाल करने होते हैं कहीं? मगर करें भी तो क्या? यह विचित्र काल की वज़ह से सच्चा मार्ग मिलता नहीं है, उसे दिखलाने के लिए ऐसी कड़ी वाणी निकलती है। वर्ना ज्ञानीपुरुष तो करुणा के सागर होते हैं।

'ज्ञानीपुरुष' की करुणा और समता

यहाँ जो सत्संग में चिपक गया, उस पर कृपा काम किए बगैर रहे नहीं ऐसा यह करुणामय मार्ग है। कैसा मार्ग? खुद का बिगाड़कर भी करुणामय मार्ग है। खुद की कमाई भले ही कम हो, पर उसे सँभालके, उसकी कमाई शुरू कराके, दुकान फिर से चालू करवा दे।

देखिये न? आपको मेरे लिए कितनी बड़ी भक्ति है। इन सबकी मुझे भली भाँति पहचान है, पर फिर भी आपको हमारे दोष नज़र आएँ, कि यह 'दादा' ऐसे हैं।

प्रश्नकर्ता : अरे! दादाजी को गालियाँ भी दूँ। दादाजी को नहीं, अंबालाल पटेल को।

दादाश्री : उन सब का मुझे घर बैठे पता चल जाए। मगर, आपको 'कषाय' कैसे फँसाते हैं और कैसी मार खिलाते हैं। इसलिए हम आपके ऊपर करुणा रखें कि मार खाते-खाते किसी दिन सयाने होंगे। कभी तो पता चलेगा कि ये मार क्यों खिलाते होंगे। मुझे क्या लेना-देना? 'दादा' को क्या लेना-देना? आपको ऐसा किसी दिन अनुभव होगा कि, 'मैंने इन जैसों की (कषायों की) कहाँ मैत्री की जो मुझे मार खिलाते हैं।'

प्रश्नकर्ता : दादाजी, ऐसा अनुभव हुआ। अनुभव कैसा कि मुझे ऐसा ही लगता था कि यह बूढ़ा (दादाजी को संबोधन) परेशान करता है और मैंने तो अपनी सारी मुसीबतों के लिए आपको ही जिम्मेदार ठहराया था, मगर बाद में वह सब इस बूढ़े ने ही ज्ञान से सुधार दिया! बाकी मैंने तो, दादाजी आपको इतनी गालियाँ दी थी कि कुछ शेष ही नहीं छोड़ा था। मगर तब भी अंदरूनी तौर पर ऐसा रहा करता था कि, 'यह दादाजी है, वह तो सच्चे हैं।'

दादाश्री : हमने भी घर बैठे यह सब जान लिया था। इसलिए एकबार तो मैंने आप से कहा भी था कि आप उलटा-सीधा बोलें, उसमें मुझे कोई हर्ज नहीं है। आप अपनी मरज़ी से यहाँ आया करना। कभी न कभी सब धुल जाएगा। आप उलटा-सीधा बोलें उसकी हमें कोई क़ीमत नहीं होती। हम तो आपका कल्याण कैसे हो यही देखा करें। आपका, आपके घरवालों का, सबका श्रेय देखा करें। आप अपनी प्रकृति अनुसार बोला करते हैं। आपकी दृष्टि वास्तव में ऐसी नहीं है। आपकी नीयत भी ऐसी नहीं है, आपके विचार भी ऐसे नहीं है, यह सब हम जानते हैं।

हम आड़ापन देखें वहाँ करुणा रखें। ऐसे करुणा रखते-रखते आड़ापन धीरे-धीरे खिसकाते रहें। वहाँ माथापच्ची ज्यादा करनी पड़े।

विराधक के लिए भी करुणा

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी की विराधना पूर्व भव में की हो तो उसका क्या परिणाम आता है? ये सारे लक्षण मुझमें हैं तो वह क्षमा के पात्र है या फिर उसका परिणाम भुगतना पड़े?

दादाश्री : ज्ञानी तो अपने पास हर मर्ज की दवाई रखते ही हैं। ज्ञानी तो करुणामय होते हैं। मतलब वे अपने हाथों में जितनी सत्ता है उतनी दवाई तो सभी को पिला ही देते हैं। मगर उनकी सत्ता के बाहर की वस्तु तो भुगतने पर ही छुटकारा है क्योंकि विसर्जन कुदरत के हाथों में है।

प्रश्नकर्ता : विराधना के लिए पश्चाताप होता रहता है।

दादाश्री : उसका पश्चाताप हो, दुःख की वेदना सहे, भुगतना पड़े, असमाधि रहा करे, उसका अंत ही नहीं आनेवाला। वह तो छोड़ता ही नहीं न?

प्रश्नकर्ता : उसका अंत ही नहीं आनेवाला, ऐसा दादाजी?

दादाश्री : अंत नहीं आनेवाला इसका मतलब यह कि वह कोई दो-चार दिन में खाली हो जाए ऐसी वस्तु नहीं है। किसी मनुष्य की यह रूम के बराबर की टंकी हो और किसी की सारे 'बिल्डिंग' जितनी टंकी हो। उसमें क्या अंतर नहीं होगा?

प्रश्नकर्ता : मगर दादाजी, वह खाली तो होगी ही न?

दादाश्री : खाली होगी। खाली होगी ऐसा मानकर हम आगे बढ़ते रहें। मगर फिर से ऐसी भूल होनी नहीं चाहिए। वर्ना वह पाइप (जिसमें से कर्मरूपी टंकी का माल खाली हो रहा हो) बंद हो जाएगा। यदि फिर से भूल होनेवाली हो तो तीन उपवास करना, मगर विराधना नहीं होने देना।

अहो! ज्ञानी की करुणा

एक बार यदि 'ज्ञानीपुरुष' के पास आ कर बैठा और फिर उस पर यदि अहंकार से पागलपन सवार हो गया तो फिर वह मारा गया ही समझना। ऐसा हो तो यहाँ पर प्रवेश ही नहीं करना, दूर रहना। यदि दूरवाले बोले तो उनके लिए बहुत जोखिम नहीं है। पर यहाँ प्रवेश करने के बाद यदि उलटा बोले (विराधना करे) उसे पगला अहंकार कहलाए। वह पगला अहंकार खुद को बहुत मार खिलाए, इसके बावजूद हम उसे बचाते रहें! एक ही धारा रख़ते है उसके लिए, करुणा ही रखा करते हैं उसके ऊपर!!

हम करुणा रखें, वह भी समझकर करुणा रखें। हम जानें कि यह आड़ापन दिखाता है क्योंकि उसकी शक्ति ज्यादा होती नहीं है, इसलिए आड़ापन दिखाता है वह, मगर यह समझकर ही करुणा रखते हैं।

सेफसाइड की बाउन्ड्री

प्रश्नकर्ता : हम जानना चाहते हैं कि व्यवहार में हमारी सेफसाइड की बाउन्ड्री(सुरक्षा-सीमा मर्यादा) क्या है?

दादाश्री : सामने का व्यक्ति हमें जुदा मानें और हम उसे एक मानें। वह हमें जुदा मानें, क्योंकि वह बुद्धि के अधीन है। इसलिए जुदा मानेगा न? हमें बुद्धि नहीं होनी चाहिए। ताकि एकता लगे, अभेदता लगें!

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला भेद बनाऐ रखे तब?

दादाश्री : वह तो उलटे अच्छा। उसके पास बुद्धि है इसलिए क्या करे? उसके पास जो हथियार होगा वही इस्तेमाल करेगा न?

प्रश्नकर्ता : फिर हम उसके साथ अभेदता कैसे रखें?

दादाश्री : मगर वह तो जो भी करता है वो परवश होकर करता है न बेचारा, और उसमें वह दोषी कहाँ है? वह तो करुणा के योग्य कहलाए।

प्रश्नकर्ता : उसके ऊपर थोड़ी देर करुणा रहे फिर मन में ऐसा हो कि इसके ऊपर करुणा रखने जैसा भी नहीं है।

दादाश्री : अरे! ऐसा तो बोल ही नहीं सकते। ऐसा अभिप्राय तो बहुत डाउन(नीचे) ले जाए हमें। ऐसा नहीं बोल सकते।

प्रश्नकर्ता : करुणा रखने जैसा नहीं है ऐसा बोलना क्या वह डबल अहंकार कहलाए?

दादाश्री : अहंकार की बात नहीं है, 'करुणा रखने योग्य नहीं है', ऐसा नहीं बोल सकते। वह हमें ऐसा नहीं कहता कि आप मेरे पर करुणा रखें। वह तो फिर उलटे ऐसा कहेगा कि, 'अहह! आए बड़े करुणा रखनेवाले।' मतलब यह सब झूठ।

प्रश्नकर्ता : करुणा रखने का प्रयत्न ही नहीं होता न?

दादाश्री : करुणा वह तो सहज स्वभाव है।

प्रश्नकर्ता : यह जो प्रयत्न करने लगे उसके रीएक्शन (प्रतिक्रिया) में 'नहीं रखने जैसी' ऐसा भाव हुआ न?

दादाश्री : वह बात ही गलत। उसे करुणा कह ही नही सकते हम। वह अनुकंपा कहलाए। करुणा तो, बुद्धि से परे हो जाएँ, तब करुणा कहलाए।

करुणा, 'दया-निर्दयता' से परे

प्रश्नकर्ता : वह करुणा किस आधार पर रहे?

दादाश्री : दया-निर्दयता नहीं रहे, उसके बाद करुणा आती है।

महावीर भगवान पर देवोंने बड़े-बड़े खटमल बरसाए मगर यदि माँस की सेज बिछायी होती तब भी वे करवट लेकर सो जाते। मतलब, ऐसा होने पर भी वे इमोशनल नहीं होते। और हमें भी यदि माँस के बिछौने पर सुलाए तो भी कुछ नहीं, इनिफेक्टिव (बेअसर)।

दया में तो सेन्सिटिव (संवेदनशील) हो जाए, करुणा में वह सभी दु:खों को देखे, मगर करुणा रखे उतना ही, मगर सेन्सिटिव नहीं होते, इमोशनल नहीं होते। महावीर भगवान इमोशनल नहीं होते। उनके दो शिष्यों को जला दिया गया तब भी वे देखा करते थे। यानी वह स्थिरता कैसी होगी? वह ज्ञानस्थिरता कहलाए। उस समय अन्य शिष्यों ने कहा कि, 'साहब, हम में से दो को जला दिया गया।' तब भगवान बोले, 'मैं तो मोक्ष का दान करने आया हूँ, मैं शरीर का रक्षक नहीं हूँ और वह हमारे हाथों में नहीं है।' उनको तो जलानेवाले के ऊपर भी उतनी

ही करुणा थी जितनी जो जलाए गए थे उन पर थी। जलानेवाले पर करुणा इसलिए थी कि 'इसका परिणाम तू भुगतेगा और उसे मैं देख रहा हूँ कि क्या परिणाम तू भुगतेगा और मैं यह भी देख रहा हूँ कि क्या परिणाम आनेवाला है।' उस पर करुणा आती है कि अरे! इसकी क्या दशा होगी बेचारे की? और जिन दो शिष्यों ने ऐसे परिणाम भुगते उनके लिए भी करुणा होती है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर मोशन और इमोशनल में फर्क क्या?

दादाश्री : यह हम सारी बात करें तब हम मोशन में होते हैं और आप इमोशनल हो जाएँ। यदि यह ट्रेन इमोशनल होकर उछलती-कूदती जाए तो अंदर क्या होगा? वैसे ही यह क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं, वे सभी इमोशन (संवेदनाएँ) होते हैं। जिन्हें किंचित्‌मात्र भी दया होती है वे भी इमोशनल होते हैं। अनुकंपा होती है वे भी इमोशनल होते हैं। भगवान महावीर में नाम मात्र भी दया नहीं होती, अनुकंपा उनमें नहीं होती, करुणा ही होती है। वे केवल करुणामूर्ति होते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो करुणा की हम क्या व्याख्या करें?

दादाश्री : निर्दयता और दया दोनों नहीं हो तब करुणा कहलाए। इसलिए भगवान को लोग कहते हैं 'कि केवल करुणामूर्ति हो।' करुणा द्वन्द्वगुण नहीं है। करुणा तो सामूदायिक भाव है, प्रेमभाव है, वह प्रेम समान ही है। एक तरह का प्रेम ही कहलाए।

सदा प्रेमस्वरूप ज्ञानी

प्रश्नकर्ता : अब करुणा में दया का स्थान ही नहीं है मगर प्रेम है।

दादाश्री : हम उस प्रेम स्वरूप में हैं। हमारा किसी के साथ मतभेद नहीं है। मुझे गालियाँ सुनाए तब भी मेरा मतभेद नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह क्या भाव कहलाए? वह करुणा कहलाए या दया कहलाए?

दादाश्री : दया का स्टेज पूरा हुआ। दया होती है वहाँ निर्दयता होती है। वह निर्दयता भगवान महावीर में नहीं है। निर्दयता छूट गई, दया छूट गई और करुणा आई।

प्रश्नकर्ता : मतलब करुणा में भी अहंकार का हिस्सा रहा है?

दादाश्री : नहीं, अहंकार नहीं।

प्रश्नकर्ता : प्रेम और करुणा में अंतर क्यों रहा?

दादाश्री : प्रेम तो अभी आगे का स्वरूप है।

प्रेम और करुणा

प्रश्नकर्ता : प्रेम और करुणा में क्या अंतर है?

दादाश्री : प्रेम में अद्वैतभाव होता है और करुणा में भेद होता है।

प्रश्नकर्ता : करुणा और अघट प्रेम वे दोनों किसके भाव हैं?

दादाश्री : ये सभी प्रज्ञाशक्ति के ही भाव हैं। अज्ञाशक्ति के, उनसे विरुद्धभाव थे सारे।

अज्ञाशक्ति में दया होती है। प्रज्ञाशक्ति में करुणा होती है। भाव वही का वही, मगर प्रज्ञाशक्ति में करुणा उत्पन्न होती है। करुणा, अहंकार रहित का भाव है और दया वह अहंकारवाला भाव है। अज्ञाशक्ति नष्ट हुई इसलिए प्रज्ञाशक्ति उत्पन्न हुई। एक का नाश होता है तब दूसरी उत्पन्न होती है। जब तक यह नाश नहीं होती तब तक वह उत्पन्न नहीं होती। अब ऐसा होना भी संभव है कि यह प्रज्ञाशक्ति थोड़ी-थोड़ी उत्पन्न होती जाए ताकि वह अज्ञाशक्ति थोड़ी-थोड़ी नष्ट होती जाए। ऐसा भी होता है मगर वह क्रमिकमार्ग में होता है।

क्षमा और करुणा

प्रश्नकर्ता : करुणा को आत्मा का मूल गुण कहा जा सके?

दादाश्री : करुणा, वह आत्मा का गुण ही नहीं होता। मगर करुणा वह सब से अंतिम भाव है। करुणा तो, आत्मा प्राप्त हुआ है, वीतराग हुए हैं, उसका लक्षण है। लक्षण के आधार पर वस्तु क्या है इसका पता चले हमें। यह क्रोध जो है वह आत्मा का मूल गुण नहीं है, चेतन और जड़ का भी मूल गुण नहीं है। वह तो व्यतिरेकगुण है (दो तत्वों के पास आने से जो तीसरा गुण उत्पन्न होता है)। तब उसका प्रतिपक्षी गुण क्षमा, वह भी आत्मा का गुण नहीं है। क्षमा के आधार पर आप जान सकें कि ये वीतराग हुए हैं। क्षमा भी सहज क्षमा होनी चाहिए। क्रोध जिसे उत्पन्न नहीं होता उसे सहज क्षमा कही। 'हम आपको क्षमा करते हैं,' ऐसा नहीं। क्षमा देते ही रहें उसे माँगना नहीं पड़ता। मतलब इतने गुण सहज होते हैं। सहज विनम्रता होती है, क्षमा सहज होती है, सरलता सहज होती है। सरलता करनी नहीं पड़ती। फिर संसार में संतोष सहज होता है। यानी सारे सहज गुण उत्पन्न हुए होते हैं। मगर वे आत्मा के गुण नहीं है। इन गुणों पर से हम नाप सकें कि आत्मा यहाँ तक पहुँचा। आत्मा के गुण नहीं। आत्मा के गुण तो अपने वहाँ ठेठ (सिद्धक्षेत्र में साथ) जाते हैं वे सारे आत्मा के गुण। और व्यवहार में, जो हमारे बताए हुए लक्षण हैं, वे। यदि हम (आप) किसी को थप्पड़ मारें और वह हमारे सामने हँसे, तब हम जानें कि इनको सहज क्षमा है। तब हमारी समझ में आए कि बात बराबर है।

प्रश्नकर्ता : क्या क्षमाभाव से क्रोध नष्ट होता है?

दादाश्री : नहीं। क्रोध नहीं आया वह क्षमा कहलाए। क्रोध करने की जगह पर क्रोध का गैरहाज़िर रहना, वह क्षमा। हम नट-खटी करें और उन्हें क्रोध नहीं आया, उसका नाम क्षमा है। क्रोध है तो क्षमा नहीं है और क्षमा है तो क्रोध नहीं है, यह डिसाइडेड (तय) हो गया।

प्रश्नकर्ता : करुणा की तरह वीतरागता वह भी लक्षण कहलाए न?

दादाश्री : वीतरागता, वह लक्षण कहलाए, वह गुण नहीं है। राग-द्वेष उसका गुण नहीं है और वीतरागता भी उसका गुण नहीं है। यह तो व्यवहार को लेकर लक्षण उत्पन्न हुए हैं। क्योंकि वहाँ (सिद्धक्षेत्र में) शब्द रूप कुछ भी है ही नहीं! यह शब्द है तब तक व्यवहार है, वे शब्दवाले गुण ही नहीं हैं वहाँ।

वीतरागता के बाद करुणा

प्रश्नकर्ता : वीतरागता और करुणा के बीच में क्या संबंध है?

दादाश्री : वीतरागता उत्पन्न होने के बाद करुणा होती है। करुणा उत्पन्न होने के बाद वीतरागता नहीं होती है। मतलब, करुणा पहले नहीं होती। वीतरागता उसका कारण है।

प्रश्नकर्ता : करुणावालों का व्यवहार कैसा होता है?

दादाश्री : उनके व्यवहार में, अपनी देह का मालिकानापन नहीं होता है, वाणी का मालिकानापन नहीं होता है और मन का मालिकानापन नहीं होता है, तब जाकर करुणा उत्पन्न होती है।

प्रश्नकर्ता : हम आप में मूर्तरूप में करुणा देखते हैं। वीतरागता देखते हैं।

दादाश्री : हाँ, मगर जिस किसी में भी देह का मालिकानापन जाएगा उसमें करुणा उत्पन्न हुए बगैर नहीं रहेगी। क्योंकि जब तक निजदेह के लिए ज़रा-सा भी मालिकानापन है, अधिक नहीं किंतु ज़रा-सा भी रहा है, तब तक करुणा उत्पन्न नहीं होती है।

करुणा की पराकाष्ठा कहाँ?

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण वीतराग ऐसे तीर्थंकरों की करुणा और खटपटिये (कल्याण हेतु खटपट करनेवाले) वीतराग ऐसे सजीवन मूर्ति दादाजी की करुणा के बीच में क्या अंतर है?

दादाश्री : यहाँ (दादाश्री का) व्यक्तिगत हो जाए। वहाँ सामान्य रूप से सब समान होता है। यहाँ तो फलाँ आए, वे आए, ऐसे व्यक्तिगत हो जाए, वहाँ व्यक्तिगत नहीं होता है, सरिखा, समान। उनकी (किसी एक व्यक्ति की) बेटी आई या अन्य कोई भी आया हो तब भी समान।

प्रश्नकर्ता : उसके परिणाम में और इसके परिणाम में क्या कोई फर्क पड़ता है?

दादाश्री : परिणाम तो एक ही प्रकार के हैं। परिणाम में फर्क नहीं पड़ता। मगर वर्तन में फर्क आए। परिणाम शुद्ध होते हैं मगर वर्तन में फर्क दिखाई दे। वर्तन तो, पहले जो प्रतीति थी उसके आधार पर है इसलिए थोड़ा फर्क दिखाई दे उसमें।

वीतरागों को तो ज़रा-सा भी राग-द्वेष नहीं। इसलिए उनमें कर सकने की शक्ति नहीं होती (करने-न करने से परे होते हैं) और हमारी तो ज़रा यह चार डिग्री कम है इसलिए हम में कर सकें ऐसी शक्ति है। यह शक्ति खूब काम करे। बस उतना ही फर्क है।

हमारे तो अभी एक-दो अवतार शेष हैं, इसलिए खटपट होती है, हम खटपटिये वीतराग कहलाएँ। हम तो कहेंगे, 'उस भाई को यहाँ लेकर आना, ऐसा करना-वैसा करना,' और उन वीतराग को तो कुछ भी नहीं। उनके दर्शन से ही हमारा (सबका) कल्याण हो जाए। ऐसा कि सच्चे दर्शन हो गये। सच्चे दर्शन कैसे करना वह आना चाहिए। जैसा जिसको आया वैसा उसको लाभ। बस, ऐसे हैं वीतराग, मगर उनकी वीतरागता जिसने पहचान ली, तो फिर वह उसकी हो गई। जितनी-जितनी पहचान ली उतना उसको लाभ। वे खुद ऐसी बाबत में हस्तक्षेप नहीं करते। वाणी सहजभाव से निकलती रहे, बस। मतलब उनको कोई खटपट नहीं। हम खटपटिये, इसलिए कहें कि इनको ले आना। क्योंकि हम जानते है कि हमारा यह अंतिम अवतार नहीं है। इसलिए हम यहाँ यह सब बोलते रहते हैं। वे ऐसा नहीं बोलते कि, 'आपका कोई मालिक नहीं है या आप में कोई हस्तक्षेप कर सके ऐसा नहीं है।' ऐसा-वैसा नहीं बोलते वे। उनको तो इतना ही होता है कि जो मोक्ष में जानेवाले हैं वे दर्शन करके मोक्ष पा लें। जो नहीं जानेवाले हैं वे नहीं पाएँ, हम वीतराग है। और हमारा इतना आग्रह होता है। अभी हम खटपट किया करते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, वह तो जो आपके पास आए और समझे तब उसका मतभेद जाए, मगर यदि नहीं आए तो उसे मतभेद रहेगा ही न? तीर्थंकरों के समय में भी ऐसा ही होता होगा न?

दादाश्री : वह ठीक है, मगर वे खटपट नहीं करते न? हम खटपट किया करें! हम तो (ऐसे मतभेदवाले को) इधर से बचा लें और उधर से बचा लें। और वे तीर्थंकर भगवान तो सिर्फ बोलें, उतना ही। सामनेवाले व्यक्ति को ठीक नहीं लगे तो वह चला जाए। मगर हम तो खटपट करें, उसे बिठायें, बिठाकर समझाएँ।

चारित्रमोह में भी केवल करुणाभाव

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं उसके अनुसार, आपका भी यह चारित्रमोह है और हमारा भी यह चारित्रमोह है, मगर उसमें अंतर रहेगा न?

दादाश्री : अंतर रहे, आपको तो बैंक में बीस हजार गिनने जाना है, फिर ऑबेरोय हॉटेल में ज़रा नाश्ता करने जाना है। मुझे ऐसा कुछ है? वह बोझेवाला चारित्रमोह, निरा बोझ। हमें चारित्रमोह का बोझ नहीं होता, हलका होवे। किंतु, यह मोह ही है। मोह के बगैर पीड़ा कौन बटोरे? यह सबकुछ मोह कहने

योग्य है, मगर मोह कौन-सा? चारित्रमोह। जिस मोह से फिर से नया मोह बँधता नहीं है ऐसे मोह की संवरपूर्वक निर्जरा हो जाती है। आपका भी ऐसा है, पर आपको बोझ होता है, बोझ रहा करे। बीस हज़ार जमा करवाना और वापस निकालना, और किसीने बीस हजार उधारे माँगे तो चिंता।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, वह आपने चारित्रमोह बतलाया, मगर क्या वह ज्ञानी का करुणाभाव नहीं कहलाए?

दादाश्री : करुणाभाव ही है वह, मगर एक प्रकार का मोह कहलाए।

प्रश्नकर्ता : करुणाभाव में भी चारित्रमोह है?

दादाश्री : बिना मोह के तो कोई होता ही नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : दादाजी, इन तीर्थंकरों को कल्याण की भावना होती है, क्या वह भी उनका चारित्रमोह है?

दादाश्री : सारा चारित्रमोह। कैवल्यज्ञान होने से पहले बारहवें गुणस्थान तक चारित्रमोह होता है और चारित्र-खलास हुआ कि कैवल्यज्ञान हो गया।

सहज करुणा सदा

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं कि ज्ञानी की सहज करुणा होती है, डिस्चार्ज कर्म के तौर पर नहीं। तब फिर, सारे तीर्थंकर जो तीर्थंकर गोत्र बाँधते हैं वह भावकर्म से है या सहजरूप से होता है?

दादाश्री : भावकर्म से बाँधते हैं। भावकर्म, मगर करुणा तो उनकी सहज ही होती है। करुणा का स्वभाव वह सहज होता है, उसमें क्रिया नहीं होती, करनेवाला नहीं होता। भावकर्म से कर्म बँधता है।

प्रश्नकर्ता : तीर्थंकरों को जब आत्मज्ञान होता है तभी वे यह भावकर्म बाँधते हैं न?

दादाश्री : वह भावकर्म है तो आत्मज्ञान होने के बाद का ही सही, मगर सम्यकत्व होने के बाद का भावकर्म है। सम्यकत्व होने के बाद जो सुख मैंने पाया वह सुख लोग पाएँ, वह यह भावकर्म है। तीर्थंकर गोत्र बाँधते हैं। इसलिए हमें भी यही होता है कि, जो सुख मैंने पाया है, वह लोग कैसे पाएँ इसके लिए हमारी भावना होती है। और करुणा वह तो सहज भाव है।

करुणा जो है वह सहज ही होती है, अपने आप, सहज करुणा। यदि कोई गाली बोले तो सहज क्षमा होती है। क्षमा वह सहज करुणा ही है। मतलब करुणा वह सहज गुण है और दया वह भावकर्म का फल है। और तीर्थंकर को तो तीर्थंकर होने के बाद भावकर्म होता ही नहीं न! भावकर्म तो पहले हुए थे। हमें यह भावकर्म है अभी, किंतु इतना ही कि, लोगों का कल्याण कैसे करना, वह। उन्होंने तो कल्याण करने के भाव किए थे उस दिन ही है तो तीर्थंकर गोत्र बाँधा था। अब वे केवल वह तीर्थंकर गोत्र खपाते हैं। उसका डिस्चार्ज होता रहता है, इसलिए उन्हें केवल करुणा, निरंतर करुणा ही होती है। जब तक भावकर्म होता है तब तक कैवल्यज्ञान नहीं होता है।

ज्ञानी की निष्काम करुणा

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी, वह आपको जो ग़रज़ हुई है वह तो निष्काम करुणा है न?

दादाश्री : निष्काम करुणा है, मगर वह करुणा भी ग़रज़ है न! यह पद आने के बाद वह तीर्थंकर पद आता है। यह पद आने के बाद जो अंतिम पद आता है वह, जगत ख़ुश (आफ़रीन) हो जाए, ऐसा आता है। वह तीर्थंकर पद है। लोगों के कल्याण हेतु ही जीते हैं वे। अपने लिए नहीं जीते हैं। थोड़ा समझ में आया मैं क्या कहना चाहता हूँ? 'ज्ञानीपुरुष' की करुणा 'वर्ल्ड वाइड' होती है, जीवमात्र के लिए होती है।

अंतिम पेम्फलेट, करुणा

प्रश्नकर्ता : वीतरागों को जो करुणा और क्षमा रहा करती थी, वे सारे गुण किस स्टेज में और कैसे बर्तें?

दादाश्री : क्षमा वह कोई वस्तु नहीं है। क्षमा मतलब क्रोध का अभाव।

और उन्हें तो करुणा का भाव होता है। करुणा सहज वस्तु है। वह योजना करने से होनेवाली वस्तु नहीं है। कोई भी क्रिया के बगैर सहज रूप से करुणा रहे। करुणाभाव लाने के लिए तो, 'करुणा रखनी चाहिए' ऐसे भाव कीजिए।

प्रश्नकर्ता : तो फिर करुणा वह परिणाम है?

दादाश्री : करुणा ही इस जगत का अंतिम पेम्फलेट है।

प्रश्नकर्ता : वह अंतिम अवतार में प्रकट होवे?

दादाश्री : वह तो अंतिम अवतार में भी होती है और एक-दो अवतार पहले भी होती है। करुणा के लिए कोई ऐसा नियम नहीं है कि अंतिम अवतार में ही प्रकट हो। मगर करुणा वह सब से अंतिम वस्तु है, वह भी सहज करुणा।

प्रश्नकर्ता : जहाँ करुणा के स्टेज में आ गया वहाँ तो फिर यह प्रतिक्रमण और ये सारे स्टेज पीछे रह जाते हैं न?

दादाश्री : करुणा में आ गया मतलब हो गया। मगर वह करुणा उत्पन्न होनी मुश्किल है। इसलिए तब तक प्रतिक्रमण किया करना। जो आपको इस समय करुणा लगती है, वह दया नाम का गुण है, भावनाएँ हैं। वह करुणा नहीं कहलाए। करुणा तो कैसी होती है? भव्य होती है। करुणा का दरवाज़ा (अंश) यदि देखने को मिल जाए फिर सारे संसार में किसी जगह ऐसा दरवाज़ा देखने को नहीं मिलेगा। उसे कारुण्य नाम का गुण कहा जाए, जो सहज होता है।

केवली को करुणा कितनी?

प्रश्नकर्ता : जो केवली होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं, उन लोगों को कारुण्य प्रकट होता है या नहीं?

दादाश्री : केवली को तो करुणा आदि कुछ होता ही नहीं है। सिर्फ कैवल्यज्ञान में ही रहने का स्वभाव होता है। किसी एक जीव को भी कुछ सिखलाते नहीं। वह तीर्थंकर थोड़े ही हैं? उसके घर का मनुष्य ही भटकता मरे न? वह तो तीर्थंकर गोत्र बाँधनेवाले ज्ञानीपुरुष होते हैं कि जिन्हें सारे जगत का कल्याण करने की भावना जागी है।

प्रश्नकर्ता : और उस भावना के हिसाब से ही करुणा होती है?

दादाश्री : वह भावना लम्बे अरसे तक रहे उसके बाद उसके परिणाम स्वरूप करुणा उत्पन्न होती है। लम्बे अरसे तक ऐसी भावना रहे तब करुणा उत्पन्न होती है और वह करुणा अंतिम दशा कहलाए। बाकी, अन्य किसी को करुणा उत्पन्न नहीं होती है। किसी जीव को किसी भी काम में लेने की कोई इच्छा ही नहीं होती तब से ही करुणा उत्पन्न हो गई होती है। जब तक उसे दूसरों का काम पड़ता है तब तक करुणा उत्पन्न नहीं होती है। पारस्परिक आधार हो तब तक करुणा नहीं होती है। एक ही जीव का आधार हो, एक ही मनुष्य का आधार हो तब भी करुणा नहीं होती। आधार आधारित नहीं होना चाहिए। हाँ, वे किसी के आधार होते हैं, किंतु किसी पर आधारित नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : ऐसा भाव से नहीं होता है कि द्रव्य से भी नहीं होता है?

दादाश्री : किसी भी रास्ते नहीं होता। द्रव्य और भाव, ऐसी अलग वस्तु होती ही नहीं है। आधार ही नहीं होता। वे निर्भय हो गए होते हैं। कोई कहे कि, 'इस घर से बाहर निकल जाइये' तब भी कुछ नहीं। ऐसे आधारित नहीं होते कि 'यह होगा तो ही मेरा चलेगा'। उसमें मिश्र चेतन का आधार बिलकुल रहना नहीं चाहिए। 'घर' का आधार तो होता है। वह

अजीव है इसलिए दावा दायर नहीं करता। मगर मिश्रचेतन तो दावा दायर करे।

करुणा और कारुण्य

करुणा यह सामान्य भाव है। करुणा सर्वत्र बरतती रहे। कैसे इनके दुःख दूर हों, सांसारिक दुःखों से जो सारा जगत जल रहा है वे सारे दुःख कैसे उपशम हों, शांति हो, सारे दुःख जाएँ, ऐसी भावना वह करुणा भावना।

प्रश्नकर्ता : अब करुणा और कारुण्य समझाइये।

दादाश्री : करुणा तो घड़ी में उपजे और फिर कुछ भी नहीं हो। करुणा बिगिनिंग है और कारुण्य परमेनन्ट है, सदैव के लिए कारुण्य। करुणा आई यानी उनमें दया नहीं रही होती। क्योंकि दया होने पर साथ में निर्दयता होती है इसलिए करुणा शब्द रखा, जो कि शुरूआत है। फिर भी वह कारुण्य नहीं है।

शब्दों में नहीं पड़ना, वे तो समाधान के लिए हैं। करुणा शब्द अलग है और कारुण्य शब्द अलग है। शब्द से लगे नहीं रह सकते। वर्ना सारी गाड़ियाँ खड़ी रह जाएँगी (हम वहीं अटक जाएँगे)।

वही कारुण्य है हमारा

मनुष्यने जब से किसी को सुख देना शुरू किया तब से धर्म की शुरूआत हुई। खुद का सुख नहीं, मगर सामनेवाले की अड़चन कैसे दूर हो ऐसा ही भाव रहा करे, वहाँ से कारुण्य की शुरूआत होती है। हमें(दादाश्री) बचपन से ही सामनेवाले की अड़चन दूर करने की लगन थी। खुद के लिए विचार तक नहीं आए वह कारुण्य कहलाए। उससे 'ज्ञान'(आत्मज्ञान) प्रकट होता है। कारुण्य का बीज पड़ा उसे 'ज्ञान' प्रकट हुए बगैर रहता ही नहीं।

दृष्टि शुद्ध नहीं होती तब तक सामनेवाले का कल्याण नहीं होता। इसलिए ही तो 'मैं' सबको (इस निर्मल दृष्टि के) दर्शन करवाता हूँ। शुद्ध दृष्टि वही कारुण्य, दूसरा कोई भाव नहीं।

इस जगत में कारुण्यमूर्ति होने की ज़रूरत है। एक चित्त होने के बाद ही कारुण्यमूर्ति हो सके। यदि कारुण्यमूर्ति हो जाए तो मोक्ष सामने आए, खोजने जाना नहीं पड़े। विरोधी के लिए भी करुणा होती है।

हम यह कहते हैं कि सर्व दुःखों का क्षय कीजिए। ये दुःख हम से देखे नहीं जाते। फिर भी हम इमोशनल नहीं होते हैं, साथ-साथ उतने वीतराग हैं। इसके बावजूद सामनेवाले के दुःख हमसे सहन नहीं हो सकते, क्योंकि हम हमारी सहनशक्ति जानते हैं। हमसे कितना दुःख सहन होता था यह जानते हैं न? तो लोगों से ऐसा कैसे सहन होता होगा इसका हमें ख्याल है और वही हमारा कारुण्य है।

जय सच्चिदानंद

Pujya Deepakbhai's Singapore Satsang & Gnanvidhi

11 September (Thursday)	7-30 pm to 10 pm	Satsang for new mahatma
12 September (Friday)	7-30 pm to 10 pm	Satsang
13 September (Saturday)	10 am to 12-30 pm	Satsang
13 September (Saturday)	7-30 pm to 10 pm	**'Gnanvidhi'**
14 September (Sunday)	5 pm to 7 pm	Follow up of gnanvidhi
15 September (Monday)		Picnic

Venue: 18, Jalan Yasin, Singapore Jain Society Building, Singapore 417991
Email: sagarnilesh@yahoo.com.sg, **Mobile:** +6581129229

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

त्रिमंदिर अडालज में...

परम पूज्य दादा भगवान की गुरुपूर्णिमा - १ से ३ अगस्त २००८

१ अगस्त (शुक्र), **सुबह** ९-३० से १२ (वी.सी.डी./अनुभव), **शाम** ४-३० से ६-३० -**प्रश्नोत्तरी सत्संग**

२ अगस्त (शनि), **सुबह** ९-३० से १२, **शाम** ४-३० से ६-३० - **प्रश्नोत्तरी सत्संग**

3 अगस्त (रवि), **सुबह** ९ से १२ - **पूजन - दर्शन - भक्ति (गुरुपूर्णिमा)**

---

१० अगस्त (रवि), **दोपहर ३-३० से ७ - ज्ञानविधि** (आत्मसाक्षात्कार पाने का भेदज्ञान का प्रयोग)

१६ अगस्त (शनि), सुबह ९ से १२ - **रक्षाबंधन** के अवसर पर दर्शन-भक्ति का विशेष कार्यक्रम

२४ सितम्बर (रवि), रात्रि १० से १२ - **जन्माष्टमी** के अवसर पर विशेष भक्ति कार्यक्रम

पर्यूषण पर्व - २७ अगस्त से ४ सितम्बर, २००८

पर्यूषण के दौरान गुजराती आप्तवाणी-६ तथा निजदोष दर्शन से निर्दोष पुस्तक पर सत्संग पारायण होगा।

स्थल : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सीटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, अडालज. फोन : (079) 39830100

सूचना : उपरोक्त किसी भी कार्यक्रम में भाग लेने हेतु अपने नजदिकी सत्संग सेन्टर या ०७९-३९८३०४०० पर कार्यक्रम से १५ दिन पहले रजिस्ट्रेशन अवश्य करवायें।

बेंगलूर

१७ अगस्त (रवि), **शाम** 6 से ८-३० - **प्रश्नोत्तरी सत्संग**

स्थल : जलाराम भवन, २९/२८, सेकन्ड मेइन इन्डस्ट्रीअल टाउन, वेस्ट ओफ क्रोड रोड, राजाजीनगर, बेंगलूर-१०

१८-१९ अगस्त (सोम-मंगल), शाम ६ से ८-३० - **प्रश्नोत्तरी सत्संग** **संपर्क :** 9341948509

२० अगस्त (बुध), शाम ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि** (आत्मसाक्षात्कार पाने का भेदज्ञान का प्रयोग)

स्थल : शिक्षक सदन ओडिटोरियम होल, कावेरी भवन के सामने, के.जी. रोड, बेंगलूर-२

पूज्य नीरूमाँ को देखिए टी.वी. चैनल्स पर

भारत ✦ **'दूरदर्शन' (नेशनल) पर सुबह ७-३० से ८ (गुरु-शुक्र) 'नई दृष्टि, नई राह'**

✦ दूरदर्शन मराठी 'सह्याद्रि' पर सुबह ७-३० से ८ (सोम, मंगल, गुरू) - मराठी भाषा में

✦ गुजरात में 'दूरदर्शन' पर प्रतिदिन दोपहर ३-३0 से ४ (अन्य राज्यो में डीडी-गुजराती पर उसी समय)

U.S.A. : ✦ 'TV Asia' Everyday 7 to 7-30 AM EST (In Gujarati)

✦ 'TV 39' (NJ) Everyday 7 to 8 AM

UK-Europe ✦ 'MA TV' पर प्रतिदिन सुबह ७-३० से ८

✦ समग्र विश्व में (भारत के अलावा) सोनी टीवी पर (सोम से शुक्र) सुबह ७ से ७-३०, (हिन्दी में)

पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल्स पर

भारत ✦ 'Zee Gujarati' पर हररोज सुबह ७ से ७-३0 (गुजराती में)

✦ 'दूरदर्शन' डीडी-गुजराती पर प्रतिदिन रात्रि ९ से ९-३० - 'ज्ञानप्रकाश' (गुजराती में)

UK-Europe ✦ 'MA TV' पर प्रतिदिन शाम ५ से ५-३०

जूलाई २००८
वर्ष-३, अंक - ९

दादावाणी

RNI No. GUJHIN/17258/05
Reg. No. GAMC - 1500
Valid up to 31-12-08
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

ज्ञानी की करुणा, जीवमात्र पर

संसार स्वार्थ का सगा है। ये सारी सगाइयाँ 'रिलेटिव' हैं। एक अकेले 'ज्ञानीपुरुष' की सगाई ही रिअल है। वे आपके प्रति अत्यंत करुणामयी होते हैं। वे खुद आत्मस्वरूप हुए होते हैं, इसलिए आपकी समस्याओं का हल निकाल देते हैं। 'ज्ञानीपुरुष' की करुणा विश्वव्यापी होती है, प्रत्येक जीव के लिए होती है। उन्हें अपने सुख की नहीं मगर दूसरों की क्या अड़चन है इसकी ही परवाह रहा करती हैं। वहीं से कारुण्यता की शुरूआत होती है। हमें बचपन से ही दूसरों की अड़चन दूर करने की परवाह थी। अपने खुद के लिए विचार तक नहीं आये वह कारुण्यता कहलाती है। ऐसा मन में हमेशा रहता है कि 'सांसारिक दुःखों में यह जगत फँसा है, वे दुःख कैसे जायें!'

– दादाश्री

Publisher & Editor Mr. Deepakbhai Desai on behalf of Mahavideh Foundation Printed at Mahavideh Foundation Printing Press 1- Parshvanath Chambers, Income Tax, Ahmedabad-14 and published.

Printed by Mahavideh Foundation - (079) 27542964 27540216